श्री राजश्यामाजी सदा सहाय

पूज्यपाद श्री प्रकाशानन्दजी शास्त्री महाराज

श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर 'श्री राजधाम जैताणा' ॥

प्रणाम

प्रवाह

प्रकाशानन्दजी शास्त्री महाराज

श्री कृष्ण प्रणामी राज सेवा संस्थान

श्री राजधाम जैताना

तहसील–सलुम्बर जि–उदयपुर–३१३०३८ (राज.)– भारत

दूरभाषः ०२९०६–२९२०५१

मो. नंबर– ९४१३२ ८५७९९

प्रणाम

आत्मदीप

जीवनदीप बन कर जला है,

जला ही रहेगा

सदा के लिए

सभी के लिए ॥

॥ प्रणाम ॥

आचार– व्यवहार– धर्म– संस्कृति– पूजा– अहिंसा– प्रेम व शान्ति का बीज है–

कोटान कोट दंडवत करुं, कोटान कोट करुं प्रणाम ।

कोटान कोट विनंती करुं, धनी मेरे सुन्दरवर श्यामावर श्याम ॥

प्रथम संस्करण : ५०००

बुद्धजी शाका : ३३२

विक्रम सम्बत् : २०६७

ईस्वी सन् : २०१०

सेवा : पचास रुपये

लिपि सज्जा तथा मुद्रण : –

प्रकाशकः– : श्री कृष्ण प्रणामी राज सेवा संस्थान,

'श्री राजधाम' जैताना तहसील–सलुम्बर. जि. उदयपुर (राज.) ३१३०३८

दूरभाषः ०२९०६–२९२०५१

PRANAM PRAVAHA
Writer- Prakashanandji Shastri Maharaj
Ed.by-
Published by- Shree Krishna Pranami
Raj Sewa Shansthan- Shree Raj Dham- Jetana At. Post; Salumbar-Udaypur-313038 (Raj.)-INDIA
T. No- 02906-292051
Mobile- 9413285799

अथ निजानन्द संप्रदाय पद्धति

ब्रह्मानन्द–रसज्ञानां ब्रह्मज्ञानवतां सताम् ।

पद्धतिं ब्रह्मसृष्टीनां वक्ष्यामि श्रृणु सुन्दरि ॥ १ ॥

गोत्रमुक्तश्चिदानन्दः ब्रह्मानन्दो हि सद्गुरुः ।

शिखा ज्ञानमयी प्रोक्ता सूत्रमक्षररूपकम् ॥ २ ॥

किशोरी परमं चेष्टं सेवनं पुरुषोत्तमम् ।
पातिव्रत्यमनन्यत्वं साधनं समुदाहृतम् ॥ ३ ॥
वृन्दावनं नित्यमुक्तं विलासः सुखसंज्ञकः ।
जाप्यं च युगलं नाम तारतम्यमनुस्मृतम् ॥ ४ ॥
ब्रह्मविद्या परादेवी देवो ब्रह्म सनातनम् ।
शाला गोलोक इत्युक्तो द्वारमूर्ध्वमुदाहृतम् ॥ ५ ॥
स्वसंवेदो समादिष्टः फलं नित्यविहारकम् ।
दिव्यब्रह्मपुरं धाम परात्परमुदाहृतम् ॥ ६ ॥
सद्गुरोश्चरणं क्षेत्रं सर्वशुद्धिकरं परम् ।
यमुनासंज्ञकं तीर्थं मननं प्रेमलक्षणम् ॥ ७ ॥
श्रीमद्भागवतं प्रोक्तं श्रवणंलक्ष्यमद्भुतम् ।
ऋषिः प्रोक्तो महाविष्णुः ज्ञानं जाग्रत्स्वरूपकम् ॥ ८ ॥
आनन्दाख्यं कुलं प्राप्तं नित्ये धाम्नि प्रकीर्तितम् ।
सम्प्रदायश्चिदानन्दो निजानन्दैः प्रकाशितः ॥ ९ ॥

वन्दौं सतगुरु चरण को, करुँ प्रेम परनाम ।
अशुभ हरन मंगल करन, श्री देवचन्द्रजी नाम ॥
श्री प्राणनाथ निज मूलपति, श्री महेराज सुनाम ।
तेज कुँवरी श्यामा युगल को, पल-पल करुँ परनाम ॥

ब्रह्मसृष्टियों की पद्धति
सद्गुरु ब्रह्मानन्द हैं, सूत्र है अक्षर रूप ।
शिखा सदा तिनसे परे, चैतन्य चिद् जो अनूप ॥ १ ॥
सेवन है पुरुषोत्तम, गोत्र चिदानन्द जान ।

परम किशोरी इष्ट है, पतिव्रता साधन मान ॥ २ ॥
श्री युगल किशोरको जाप है, मन्त्र तारतम्य सोय ।
ब्रह्म विद्या देवी सहीं, पुरी नवतन मम जोय ॥ ३ ॥
अठोत्तर सौ पख शाखा सही, शाला है गोलोक ।
सद्गुरु चरण को क्षेत्र है, जहाँ जाय सब शोक ॥ ४ ॥
सुख विलास नित्य वृन्दावन, ऋषि महाविष्णु जोय ।
वेद हमारो स्वसं है, तीरथ जमुना सोय ॥ ५ ॥
शास्त्र श्रवण श्री भागवत, बुद्ध जाग्रतको ज्ञान ।
कुलमूल हमारो आनन्द है, फल नित्य विहार प्रमान ॥ ६ ॥
दिव्य ब्रह्मपुर धाम है, घर अक्षरातीत निवास ।
निजानन्द है सम्प्रदाय, ये उत्तर प्रश्न प्रकाश ॥ ७ ॥
श्री देवचन्द्रजी निजानन्द, तिन प्रगट करी संप्रदाय एह ।
तिनथें हम यह लखी है, हम द्वार पावें अब तेह ॥ ८ ॥

प्रणामी परमधाम से, लाए तारतम वाणी ।
प्रगट किए ब्रह्माण्ड में, मेटे तिमिर निशानी ॥
प्रणाम एक सोच है, प्रणाम विराट चिन्तन ।
प्रणाम सांस्कृतिक अवधारणा, प्रणाम स्नेह का बन्धन ॥
प्रणाम शिष्टाचार है, प्रणाम आत्माभिनन्दन ।
प्रणाम करो श्री कृष्ण को, छूट जाए भव बन्धन ॥

आशीर्वचन :-

मुझे अतीव प्रसन्नताका अनुभव हुआ कि श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके विद्वान सन्त श्री प्रकाशानन्दजी शास्त्री द्वारा लिखित 'प्रणाम प्रवाह' नामक पुस्तिका प्रकाशित हो रही है। इसके

अधिकांश अंशका अवलोकन करने पर मुझे अनुभव हुआ कि शास्त्रीजी ने प्राचीन शास्त्रीय परंपरा एवं अर्वाचीन व्यवहार शैलीका समन्वय कर प्रणामका सार्वभैमिक महत्त्व एवं अभिवादन के लिए प्रयुक्त शब्दोंमें इसकी सर्वोत्कृष्टता दर्शानेका महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

शास्त्रीजी अच्छे लेखक और रचयिता हैं। मुझे विश्वास है कि सुधी पाठक इस पुस्तिकाका अवश्य मूल्यांकन करेंगे और यह सभीके लिए उपादेय होगी। इसके लिए शास्त्रीजीको साधुवाद एवं श्री ५ नवतनपुरी धाम के शुभाशीर्वाद प्रदान करते हुए मुझे अपार हर्षका अनुभव हो रहा है।

शुभाकांक्षी

जगद्गुरु आचार्य श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज

श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर

सम्मतिः

श्रीमत्प्रकाशचन्द्रेण प्रणामस्योपवर्णितम्।
अस्मिन् ग्रन्थे महत्त्वं यत् तत्साधुवादमर्हति॥ १॥
विद्यावान् गुणवानेषो लेखकः सुप्रतिष्ठितः।
प्रज्ञाप्रकाशसंयुक्तो यथानाम प्रकाशते॥ २॥
चन्द्रस्येव मयूखा याः ग्रन्थरत्नाकरे कीर्णाः।
ज्ञानज्वारो भवेन्नूनं पाठकानां मनस्तटे॥ ३॥
मलाः प्रक्षालयिष्यन्ते कलिजन्याः सुसंचिताः।
कृष्णकृपाप्रकाशेन दीपिष्यते मनस्तटम्॥ ४॥
प्रणाम एव कर्त्तव्यो नम्रभावेन सर्वथा।
सर्वं मत्वा हि कृष्णांशं ततो याति परं पदम्॥ ५॥
कृष्णप्रणामिनां दत्तं दर्शनं यन्मनोहरम्।
तस्माद्धरिष्यते क्षिप्रं बुद्धिजः सर्वसंशयः॥ ६॥

निजानन्दस्य वृत्तं यत् प्राणनाथस्य जीवनम् ।
वर्णितं तद् भवेत् शश्वत् लोकेषु सर्वपावनम् ॥ ७ ॥
ग्रन्थश्च पठनीयोऽयं सम्पूर्णस्तत्त्ववेदिभिः ।
सामान्यैश्च विचारार्थं सर्वहितकरो यतः ॥ ८ ॥
कामये ग्रन्थसाफल्यं लोकानामुपकारिता ।
पाठकानाञ्च कल्याणं ग्रन्थकर्त्तुश्च तोषणम् ॥ ९ ॥
दीर्घायुष्यं तथारोग्यं लेखकस्य च कामये ।
लिखेत् स नूतनान् ग्रन्थान् लोकोपकारभावतः ॥ १० ॥

शुभकांक्षी
प्रो. सुधीकान्त भारद्वाज
२८-२९, जैन कालोनी पार्ट २,
उत्तम नगर नई दिल्ली-११००५९

आत्म-निवेदनः-

'प्रणाम प्रवाह' इस लघु पुस्तिका को सुधी पाठकों, मर्मज्ञ विद्वानों के कर कमलों में अर्पण कर हमें प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। जिस प्रकार गंगा हमारी राष्ट्रीय धरोहर पुण्यवान प्रवाह है इसी प्रकार 'प्रणाम' हमारा जीवन प्रवाह है। प्रवाह चाहे संस्कार का हो या जल का उसे चालू व जीवित रूप में देखने पर ही जीवन में आनन्द आएगा।

मानव जीवन, एक निश्चित लक्ष्य प्राप्ति के लिए मिला हुआ है। वह लक्ष्य है परमात्मा। जीव के साथ सम्बन्ध रखनेवाला यह मानव जीवन, शरीर एवं प्राण का संगम है। प्राण का आधार

जीवात्मा (ईश्वर) है, जीवात्मा का आधार आत्मा तथा आत्मा का आधार परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्ण हैं। "एकमेव अद्वितीयं ब्रह्म" अर्थात् अनन्त ब्रह्माण्ड के स्वामी एक ही पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्ण हैं। अतः प्रणाम का मूल सम्बन्ध श्री कृष्ण के श्री युगल चरणकमलों से हैं।

'प्रणाम' अभिवादन के रूप में प्रयोग किया जाने वाला शब्द यह आत्मा का उद्गार है जो एक दिल में पैदा होता है तथा दूसरे दिल में खिलता है। भारतीय धर्म परम्परा के सनातन मूल्यों की रक्षा के लिए यदि प्रणाम शिष्टाचार को राष्ट्रीय शिष्टाचार के रूप में लागू किया जाए तो भारतीय संस्कृति की मूल अवधारणा "वसुधैवकुटुम्बकम्" की भावना को चरित्रार्थ करने में ज्यादा समय नहीं लगेगा। क्योंकि 'प्रणाम' सभी सम्प्रदायों मान्यताओं के गर्भ में निहित है। जैसे हम हरि ॐ, राम-राम, जय श्री कृष्ण, नमस्ते, सलाम (अलैकुम), गुड मॉर्निंग (Good Morning) आदि शब्दों को व्यवहार में लेते हैं। इन सभी घटकों का मूल-राजमार्ग तो 'प्रणाम' ही है। १ अरब ९७ करोड़ २९ लाख ४९ हजार ५२ वर्ष पुरानी हिन्दू धर्म की आध्यात्मिक परम्परा के मूल रूप में प्रणाम का ही प्रयोग होता आ रहा है। इस प्राचीन धरोहर 'प्रणाम' शब्द को सीमित परिभाषा से मुक्त कर तथा उस का व्यापक आधार सामने रखते हुए इस प्राचीन प्रणाली को यथा सम्भव अद्यतन बनाने का प्रयास इस लघु पुस्तिका-'प्रणाम प्रवाह' में किया गया है, ताकि प्रणाम के महत्त्व को समझा जा सके तथा इसके प्रति समाज एवं नई पीढ़ी के सितारों को जागृत किया जा सके।

इस पुस्तिका में श्री कृष्ण प्रणामी धर्म के आद्य संस्थापक सद्गुरु निजानन्दाचार्य श्री १०८ देवचन्द्रजी महाराज एवं उनके परम शिष्य महामति श्री प्राणनाथ जी महाराज, प्रणामी धर्म, प्रणाम के प्रति समझदारी एवं प्रेमलक्षणा भक्ति आदि विषयों का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है। "प्रणाम प्रवाह" यह एक सोच है, एक महासङ्कल्प है। शास्त्रों का दोहन किया गया सार तथा निजी अभिव्यक्ति है। रचनाकार चाहे कितना भी सतर्क हो उसकी रचना में पारदर्शिता के गुण भले ही मौजूद क्यों न हो परन्तु भारतीय संस्कृति के अथाह सागर को थाह पाना बड़ा ही कठिन व दुष्कर

कार्य है क्योंकि 'प्रणाम' भारतीय संस्कृति की आत्मा है यह "निस्स्वार्थ 'प्रेम' शब्द का पर्याय है जो किसी युग सापेक्ष नहीं है, सनातन परम्पराका एक आदर्श शब्द है जो शिष्टाचार के रूप में प्रयोग होता है। इस महान राष्ट्रीय धरोहर का विश्लेषण एवं व्याख्या तो परमादरणीय–नित्य वन्दनीय तत्त्व दर्शी ऋषि हृदय ही कर पाएगा। ब्रह्मलीन परंहंस श्री १०८ रंगीलदास जी महाराज, श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर जैताणा के संस्थापक आदरणीय श्री १०८ पदमदासजी महाराज, श्री कृष्ण प्रणामी राज सेवा संस्थान, 'श्री राजधाम' जैताणा के संस्थापक आदरणीय श्री १०८ गुलाबदासजी महाराज, ब्रह्मलीन–पिता श्री हरिप्रसाद घिमिरे तथा माता श्री जगमाया घिमिरे की सद्प्रेरणा एवं परम आदरणीय अनन्त विभूषित आद्यधर्मपीठाधिश्वर श्री ५ नवतनपुरी धाम के चौदहवें आचार्य श्री जगत्गुरु आदरणीय श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराजश्री की महती कृपा एवं शुभाशीर्वाद से ही यह रचना का कार्य सम्भव हो पाया है अतः आपके श्री चरणों में सहृदयता पूर्वक शत्–शत् प्रणाम करते हैं ॥ प्रणाम ॥

यदि "प्रणाम प्रवाह" की रचना में न्यूनताएँ एवं अपूर्णताएँ प्रतीत होती हो तो आदरणीय पाठक वृन्द से मेरा निवेदन है कि वे उनकी ओर मेरा ध्यान आकृष्ट करने का अनुग्रह करें जिससे कि आगामी संस्करण में उसका उचित परिमार्जन किया जा सके। प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में जिन–जिन लेखकों के संदर्भ पुस्तकों का सहारा लिया गया तथा उनके विचारों का दोहन किया गया है उन सभी सन्माननीय लेखक गण का मैं बहुत–बहुत आभारी हूँ। प्रूफ संसोधन में सहयोग देने वाले सांस्कृतिक–एवं धार्मिक साहित्यों के उत्कर्ष के लिए सतत प्रयत्नशील आदरणीय प्रो. दिलीप आसर साहब को भी सहृदयता पूर्वक प्रणाम करता हूँ। राष्ट्रीय अस्मिता का प्राण तत्त्व 'प्रणाम' के दिव्य भाव उद्गारों से सुन्दरसाथ एवं जनताजनार्दन का परम मंगल होगा इसी भावना से प्रेरित होकर 'प्रणाम प्रवाह' यह लघुग्रन्थ प्रथम बार प्रकाशित किया जा रहा है। यदि इससे यद् किञ्चित् भी लोक–कल्याण हुआ, प्रणाम के प्रति जागरुकता बढ़ी तो मैं अपने इस लघु प्रयासको सफल समझूँगा, सहृदयता के साथ सबको शत्–शत् प्रणाम। प्रकाशानन्द महाराज।

<u>समर्पण</u>

परमहंस १०८ श्री रंगीलदासजी महाराजजी के श्री चरण कमल में शत्–शत् प्रेम प्रणाम ॥ जीवन निर्माण, मानव निर्माण, चरित्र निर्माण, मर्यादा निर्माण, धर्म एवं प्रेम निर्माण के लिए निर्माण हुआ है, भारतीय संस्कृति का प्रथम व मूल शिष्टाचार 'प्रणाम' ।

प्रणाम करुँ सब सृष्टि को, उर में सब को आह्वान ।
हर दिल में यह भाव जगे, पल–पल सब में प्रणाम ॥

स्तवन :–
आलोकित पथ बन जाए, हे जग जीवन ! अन्तर्यामी ।
अपलक नयन रह जाए, पाकर श्री कृष्ण प्रणामी ॥
पल–पल थिरक उठे हृदय स्पन्दन, दिल की आवाज़ मन मोर में ।
प्रणाम हो हर श्वास हर स्वर में, मन लूटा जाए माखन चोर में ॥
महिमामय जीवन रस धारा, प्रणाम जग का नारा है ।
युग–युग नूतन अधुनातन बन, वरस रहा हज़ारा है ॥
दई प्रदखिणा अति घणी, करुं दंडवत परणाम ।
सहु साथना मनोरथ पूरजो, मारा धणी श्री धाम ॥
मनना मनोरथ पूरण कीधा, मारा अनेक वार ।
वारणे जाए इन्द्रावती, मारा आतमना आधार ॥
तुम आए सब आइयां, दुःख गया सब दूर ।
कहे महामत ए सुख क्यों कहूँ, जो उदया मूल अंकुर ॥

अनुक्रमणिका

१. आशा का दीप

२. प्रणाम जीवन का उपहार

३. प्रणाम जीवन की यात्रा

४. प्रणाम जीवन की आस्था

५. प्रणाम भाव का मन्दिर

६. प्रणाम दिल का रिश्ता

७. प्रणाम जीवन शिल्प

८. प्रणाम में प्रचण्ड आकर्षण शक्ति

९. प्रणाम अभिवादन

१०. प्रणाम स्वानुशासन

११. प्रणाम एवं श्री कृष्ण प्रणामी

१२. प्रणाम आत्मा की आवाज़

१३. प्रणाम जीवन की रूपरेखा

१४. प्रणाम के प्रयोग से अहंकार नष्ट

१५. त्याग इमानदारी एवं बलिदान जीवन के आभूषण

१६. प्रणाम परम्परा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

१७. प्रणाम का चमत्कार

१८. कहीं खुशियाँ कहीं गम प्रणाम हमारे संग

१९. प्रणाम से नम्रता एवं सकारात्मकता

२०. प्रणाम रहस्यात्मक रक्षा सूत्र

२१. भारतीय सांस्कृतिक चेतना के प्रति पाश्चात्य दृष्टिकोण

२२. प्रणाम एवं प्रणामी सुन्दरसाथ

२३. प्रणाम मन एवं आत्म वेगी भाव तरंग

२४. ब्रह्म एवं पूर्णब्रह्म

२५. प्रणाम शब्द ब्रह्म

२६. प्रणाम जीवन का नैतिक अधिकार

२७. ज्ञान विज्ञान का मानक रूप प्रणाम

२८. प्रणाम मानव मनकी पूर्ण परिकल्पना

२९. श्री प्राणनाथजी का प्रादुर्भाव

३०. शिक्षा एवं दीक्षा प्राप्त करना

३१. धर्म पत्नी फूलबाई को त्याग देना

३२. गुरु भक्ति में दृढ़ता

३३. श्री मिहिरराज को वैराग्य होना एवं अरब यात्रा

३४. मिहिरराज का सद्गुरु से वियोग होना

३५. विन्दु पुत्र एवं नाद पुत्र को जिम्मेदारी सौंपना

३६. गुरु पुत्र श्री बिहारीजी को पदासीन करना

३७. तारतम वाणी का अवतरण

३८. धर्मपीठ की स्थापना करना

३९. सार्वभौमिक प्रतिभा का प्रथम व्यक्तित्व महामति प्राणनाथ

४०. महामति श्री प्राणनाथजी का विश्व देन

४१. प्रेम लक्षणा भक्ति

४२. काम एवं प्रेम में अन्तर

४३. पतिव्रत भाव

४४. विरहानुभूति

४५. जीवन धर्म एवं व्यवहार

४६. प्रणाम के प्रति समझदारी युग की माँग

४७. मानव जीवन

४८. संस्कार का मूल माता

४९. प्रणाम राष्ट्रीय अस्मिता की पहिचान

५०. साष्टांग प्रणाम का विधान

५१. प्रणाम क्रिया में, ध्यान में रखने वाली बातें

५२. प्रणाम से विश्व कुटुम्बकम् की भावना साकार होगी

५३. प्रणाम परमधाम का पहिचान पत्र

५४. विज्ञान अभिशाप व वरदान भी

५५. परिशिष्ट भाग

१-आशा का दीप

"मन का पंछी तड़प रहा है अपने प्रियतम को पाने के लिए, छटपटाती एक विरही आत्मा के, दिल के दर्द को मिटाने के लिए मात्र एक पल का झलक चाहिए अपने प्राण वल्लभ प्रियतम का, शायद यह सम्भव नहीं हो रहा है अतः तड़प है, बेकरारी है एक मासूम हृदय की विवशता है। आँखों में आँसू छलक रहे हैं। विरह के अथाह सागर में बेसुध दिल की धड़कने धड़क रही हैं। बार-बार रुक-रुक कर याद आ रही है, अपने प्रियतम की। दिन हो या रात, मास हो या वर्ष, जागृत हो या नींद में, पल-पल घड़ी-घड़ी हर भाषा हो या आशा में वही दिखता है। उस छटपटाहट करती विरही आत्मा के लिए खाना-पीना, उठना-बैठना, सोना-जागना तथा बोलना भी सब कुछ हराम हो जाता है" अतः उस विलखती, गुन-गुनाती अलापती, लड़खड़ाती चीखती, मिटती, विरही आत्मा के लिए जीवन में किसी न किसी एक सहारा की आवश्यकता होती है, ता कि वह अपनी मंज़िल पर पहुँच कर आशा के दीप को जला सके। उसके लिए एक मात्र सहारा है प्रणाम। चलें हम सभी प्रणाम से ही अपने जीवन की यात्रा का शुभारंभ करें तथा प्रणाम के शुभ्र-

आलोक में अपने आप को आलोकित करते हुए धामधनी अक्षरातीत श्रीकृष्ण के दर्शन करें। प्रणाम का यह चिराग हमेशा के लिए जलता ही रहे। सब के उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाओंके साथ सब को कोटानकोट प्रेम प्रणाम है।

पूज्यपाद श्री प्रकाशानन्दजी शास्त्री महाराज
श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर, 'श्री राजधाम' जैताणा ॥

२-प्रणाम जीवन का उपहार

देख लिया देखते ही रह जाएँगे। सुन लिया सुनते ही रह जाएँगे। हर नया सुन्हरा पल, नया वक्त एक अनुपम उपहार (अमूल्य तोहफ़ा) को लेकर आता है। इस वक्त का नया भेंट है-"अनमोल रत्न प्रणाम"। चलें इसी बहुमूल्य जीवन उपहार को स्वीकार करें। दैनिक जीवन व्यवहार में अपनाएँ। हर दिन की शुरुआत ताज़गी के साथ प्रणाम से हो। विनम्रभाव से सब को प्रणाम करें तथा मंगलमय वातावरण एवं उज्ज्वल भविष्य की शुभ कामनाओं के साथ जीवन को मधुर और गौरवान्वित करें।

३-प्रणाम जीवन की यात्रा

जिन्दंगी एक खूब सूरत सफ़र है। कुदरत का कानून है चलते ही रहना जब तक अपनी मंज़िल न आए। रुकना ही मृत्यु है। जीवन के पथ में आगे बढ़ने का खूब सूरत तरीका यही है कि हम सब हिल-मिलकर चलें तथा यात्रा का शुभारम्भ विनम्र प्रणाम से करें। कण-कण में पूर्ण ब्रह्मपरमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्ण की सत्ता है। सभी देहधारी जीव, देवी-देवता, कार्य बह्म-समग्र प्रकति तथा विभूति ब्रह्म आदि में उसी की शक्ति विद्यमान हैं, अतः सभी को उसी अन्तर्यामी परमात्मा का व्यवहारिक व बाह्यरूप समझकर आत्मीय भाव से सभी के कल्याण एवं प्रसन्नता के लिए दोनों हाथ जोड़ कर, झुक कर प्रणाम करें।

चिदादित्यं किशोराङ्गं परे धाम्नि विराजितम् ।
स्वरूपं सच्चिदानन्दं निर्विकारं सनातनम् ॥

४-प्रणाम जीवन की आस्था

प्रणाम शब्द जीवन प्रभात की प्रथम मुसकान, प्रथम पुष्प, प्रथम शिष्टाचार या अभिवादन, भारतीय संस्कृति का प्राण एवं मानव सभ्यता की आत्मा है । प्रणामी, सृष्टि का प्रथम श्रेष्ठतम् समर्पित व प्रामाणिक साधक है । 'प्रणाम' एक अद्‌भुत आकर्षण शक्ति है । हर दिल का मधुर व पावन सम्बन्ध, अपनत्त्व व अपनापन प्रणाम से ही सम्भव है । सच तो यह है कि प्रणाम, एक मुस्कुराते-गुन-गुनाते-झूमते-नाचते अल्हड़ व निर्दोष दिल एवं मासूम हृदय का बुलंद हौसला व सद्भावनामय थिरकते चित्त की आल्हादकारी सद्‌वृत्ति है, जिसमें आदर स्वागत, आत्म-सन्मान, समर्पण एवं आत्म-मिलन की तीव्र आतुरता, उमंग व उल्लास है ।

मिलन की प्रसन्नता एवं विदाई की दु:खद घड़ी पर प्रणाम ही, आत्म-पीड़ा एवं बिलखते दिल की वेदना से आँखों में छलकता हुआ टपकने वाला आँसू है । आत्मीयता के भाव-आवेग में मौन स्वीकृति एवं निस्तब्धता भी प्रणाम ही है । यह हृदय-वीणा है, जिस पर मानव जीवन का मन-मोहक संगीत लह-लहाता है । प्रणाम यह एक जीवन-प्रवाह है सिर्फ बहता ही रहता है । चुपचाप बहने वाला अद्‌भुत व विलक्षण प्रवाह जीवन वृक्ष की तरह शायद अंकुरित होता है, फूल की तरह चमन में खिलता है, चन्दन की तरह सुगन्ध बिखेरता है, माखन की तरह मुलायम रहता है और ओस की तरह शांत होता है । जीवन वसंत की बहार लेकर धरती पर आगमन का प्रथम स्वास एवं जीवन विसर्जन का अंतिम स्वास प्रणाम है । यही हमारे दैनिक जीवन के सुख व दु:ख का भागीदार मानव जीवन की आस्था है ॥

५-प्रणाम भाव का मन्दिर

प्रणाम, जगमगाते दिल, चमचमाती धड़कन, मस्तीभरी खिलती हुई जवानी का नशा की तरह मानव मात्र का एक सहारा है जो कभी नहीं छूटता जब तक जीवन व आत्मा–प्रवाह चालू रहता है। प्रणाम से ही अखिल ब्रह्माण्ड में प्रेम, बन्धुत्व, एकात्म–भाव का परचम लहराया जा सकता है। प्रणाम, विकास एवं उन्नति का मूल द्वार है। वह दिल के विशुद्ध भाव का मन्दिर है जहाँ सभी लोग सिर झुकाते हैं। देवता किसी मिट्टी, काष्ठ की मूर्ति, सोना, चाँदी, ताँबे, पीतल आदि धातुओंकी प्रतिमा और पत्थर की शिला में नहीं रहते, वे तो प्राणी के दिल एवं हृदय के पवित्र भाव में विराजमान हैं। विनम्रता पूर्वक प्रणाम करने से मन में सद्भावना जागृत हो जाती है। प्रणाम एवं सद्भावना देवताओं को भी प्रिय है–

न काष्ठे विद्यते देवो न शिलायां कदाचन।
भावे ही विद्यते देवस्तस्माद्भावं समाचरेत्॥ (२/३८/३ ग. पुराण)

६–प्रणाम दिल का रिश्ता

जीवन प्रभात के स्नेह सफ़र में प्रणाम शायद खून का रिश्ता तो नहीं हो सकता, परन्तु इतना तो हम ज़रूर सोच सकते हैं– विचार कर सकते हैं तथा कह सकते हैं कि यह अवश्यमेव दिल से दिल का रिश्ता है, एक दिली का रिश्ता है, दिल से दिल को जोड़ने का अचूक रिश्ता है, अन्तर्मन के भाव–जगत् का अत्यन्त सूक्ष्म व असीम रिश्ता है, आत्मीयता का पावन व स्नेह भरा रिश्ता है। प्रणाम करना सबसे स्नेह भाव रखना, जीवन में सत्यं, शिवं, सुन्दरम् (The Truth, The Good, The Beautiful) को सृजन करना है। प्रणाम भारतीय मानस (मन) का चमत्कारिक आविष्कार है। इसमें सहज व आश्चर्य जनक तरीके से विश्व–व्यापक चेतना को अपने आप में जोड़ने, समष्टिगत चेतना को अपना बनाकर ममता–स्नेह–प्यार व वात्सल्य की धारा बहाने तथा **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** की मंगलमय सर्वोच्च भावना को चरित्रार्थ करने की अद्भुत व मौलिक क्षमता है। प्रणाम, वस्तुतः प्रणामी–प्रज्ञा की अभूतपूर्व संकल्पना है। यही वास्तविक जीवन अर्थात् आत्मा का

चिन्मय रिश्ता है। एक दूसरों को प्रणाम करने पर हमें हर नया पल, नया उमंग, नया जीवन, नई-नई बहारों का अनुभव होता है। जन्म-जन्मान्तर से धमकाए गए बेकसूर टूटते हुए दिल, तड़पते हुए दिल, तनाव व आतंक की ज्वाला से झुलसते हुए दिल, किंकर्तव्यतामूढ अन्धकार में भटकते हुए दिलों में ममता का लेप लगाकर ढाढ़स बाँधने, उन सभी दिलों में नई शक्ति संचार व नई उमंग भरकर सावचेत करने का अविकल्प साधन प्रणाम ही है। यही हमारा वास्तविक जीवन है। यही जीवन दर्शन है। यही जीवन का अनन्त प्रवाह है जो बहता ही रहता है.... बहता ही रहता है.... बहता ही रहता है, जब तक अंतिम लक्ष्य ब्रह्मानन्द रसामृत अक्षरातीत धामधनी श्री कृष्ण के दिल में समा नहीं जाता क्योंकि यह दिल का रिश्ता है। जो सर्वदा पूर्ण है, सच्चिदानन्दमय है- अजर-अमर अविनाशी है, अनंत आत्मा का मूल लक्ष्य मूल मिलावा में सदा अचल है।

७-प्रणाम जीवन शिल्प

'प्रणाम' मानव जीवन का नैतिक आधार है। इस महामूल्य जीवन शिल्प के बिना, जीवन शून्य हो जाता है। प्रणाम ही जीवन की आभा है, इससे ही हमारा जीवन हरा-भरा रहता है। प्रणाम ही सजीव शरीर में भाव वर्धक जीवन रसायन की वह प्रक्रिया है जिसके प्रयोगसे मानव पूर्ण मानव (प्रणामी) बनता है। प्रणाम के बिना जीना क्या जीना है ? प्रणाम के बिना जीवन एक ब्रेक रहित गाड़ी की तरह है। शील नैतिक आचरण है। मन की स्थायी वृत्ति व स्वभाव है। इसी महामूल्य नैतिक आचरण व व्यवहार की शुरुआत, प्रणाम से होता है। इस जीवन शिल्प के अभाव में, मात्र शिक्षा, उपदेश एवं ज्ञान का भी कोई महत्त्व नहीं होता है-

शील बिना आदर्श श्रेष्ठता, तार बिना झनकार नहीं।
शिक्षा क्या स्वर साध सकेगी, यदि नैतिक आधार नहीं॥

जिस परमात्मा ने हमें मानव तन देकर इस धरती की शोभा बढ़ाई है, यह अद्‌भुत है, एक विलक्षण कार्य है। अतः हमारा भी यह फर्ज बनता है कि हम भी उस मालिक को याद करें क्योंकि

जिन्दगी के पतझड़ से बाहर निकलने के लिए तथा परमात्मा की झलक पाने के लिए ही यह जीवन हमें मिला हुआ है, इस मानव जीवन से ही अतुलनीय खजाना अर्थात् अखण्ड खजाना–परमात्मा की प्राप्ति होती है। इस को वृथा गवाँना क़तई शोभा नहीं देती। आशा है हम अपनी–अपनी समझदारी से सामाजिक प्राणी के रूप में अपने–अपने दायित्त्व को निभाएँ तथा समाज की भलाई एवं उत्कर्ष के लिए प्रणाममय व्यवहार बनाएँ तथा मानसिक विकार से बचें।

अखण्डमण्डलाकारं कोटिसूर्यसमप्रभम्।
सिंहासने समासीनं, ध्याये ब्रह्म सनातनम्॥

८–प्रणाम में प्रचंड आकर्षण शक्ति

प्रणाम में चुम्बकीय आकर्षण है। इसमें मानव जीवन–व्यवहार की धारावाहिक प्रचंड आकर्षण शक्ति है। हर दिल में समरसता घोलने वाला दिल से दिल को जोड़ने वाला, हर धड़कन की ताक़त तोलने वाला, विषय–विकार को छोलने वाला, दिल का दरवाज़ा खोलने वाला, प्रेम–मर्यादा की भाषा बोलने वाला–यह प्रणाम भारतीय मानस का आश्चर्यजनक आविष्कार है। मानव जीवन के स्वर्ण काल (बाल्यकाल) से वृद्धावस्था की सिन्दूरी सन्ध्या के विराम काल तक साथ देने वाला जन–जन्मान्तर का साथी–'प्रणाम' अदृश्य आत्म–शक्ति का विस्मय कारी रहस्य है। यहाँ सवाल उठता है कि–क्या प्रणाम रूपी भावनात्मक उपकरण को त्याग कर हम सभी शिक्षित कहलाएँगे ? सौन्दर्यहीन, शिष्टाचार भ्रष्ट, मान–मर्यादा हीन निर्बल जीवन जीने में हमें मज़ा आएगा ? यह प्रश्न सबके दिल को कुरेदता है। यहाँ मौन रहकर सोचने की बात है। वाचक वृन्द ! यह कोई कलम–घिस्सू का सवाल नहीं है यह तो भारतीय सांस्कृतिक संस्कार मंच का सवाल है।
संस्कार एवं शिष्टाचार युक्त जीवन, खिलती कलीकी तरह आनन्दकी बहार लेकर आता है परन्तु कृत्रिम जीवन अल्प समय में ही मुरझाए हुए फूलकी तरह नष्ट हो जाता है। पाश्चात्य संस्कारकी चमक–दमकमें कोई दम नहीं है, जो शक्ति भारतीय संस्कृतिके संस्कारमें है, क्योंकि यहाँ का संस्कार ही जीवनमें आकर्षणका केन्द्र है।

माता–पिता या गुरुदेव जब खड़े पाव ज़मीन पर हों तो उस समय यदि हम उनके श्री चरणों में प्रणाम करते हैं तो हमारा मस्तक का संबंध उनके चरणों में तथा चरण का सम्बन्ध धरती से होने पर वहाँ जबरदस्त अर्थिंग अर्थात् दो शक्तियों का संघात होता है अतः प्रणाम करते ही हमारे मग़ज शक्ति की सक्रियता बढ़ जाती है। जिसका दिमाग़ पहले से तेज है वह और तेज हो जाता है तथा जो मन्द दिमांगका है उसके दिमाग़ में भी नई ऊर्जा का संचार होता है। मस्तक से चरणों का स्पर्श कर जो दण्डवत् प्रणाम करता है वह अधिक ऊर्जा प्राप्त करता है। दोनों हाथों को जोड़कर जो प्रणाम करता है वह भावुक व विनम्र होता है। एक हाथ ऊँचा कर प्रणाम करना शास्त्र निषिद्ध है। कभी भी एक हाथ ऊँचा कर प्रणाम नहीं करना चाहिए। अगर एक हाथ ऊँचा कर प्रणाम कर दिया तो वह निश्चित रूप से पाप का भागीदार होजाता है, तथा आयु–विद्या–यश और बल आदि सबकुछ खो बैठता है। अतः मन में पवित्र भाव रखकर, सिर झुकाकर चरणस्पर्श के साथ हाथ जोड़कर दण्डवत् प्रणाम करने वाला साधक या भक्त, सबका प्रिय, उत्तम गुण युक्त सम्पूर्ण शक्ति सम्पन्न मानव तथा समाज का कर्णधार होता है।

९–प्रणाम अभिवादन

किसी श्रेष्ठ या शुभ कार्य के प्रारंभमें हम दो हाथों को जोड़कर पूर्णब्रह्म परमात्मा श्री राजजी की वन्दना करते हैं। इस वन्दना या प्रार्थना से हमारा मन पवित्र होता है। पवित्र मन से हमारा व्यवहार सुधरता है। मानसिकता ठीक होती है। अपने इष्टदेव प्रसन्न होजाने से हमारा हर कार्य सिद्ध होजाता है। वन्दन शब्द का अर्थ होता है– नमस्कार और अभिवादन, हस्त संयोजन, शिरोनमन आदि प्रणिपात को नमस्कार या प्रणाम कहते हैं। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसीका गुण स्तवन करना अभिवादन कहलाता है१ ।

प्रणाम मानव हृदयकी भाव सत्ता पर आधारित प्राणों का अभिवादन है। इसी की आँचल में मानवीय जीवन दर्शन अपनी आँखें खोलता है। यही अभिवादन समय चक्र के असंख्य पलों को पार कर,

मानवीय सांस्कृतिक परम्पराकी कालजयी नाड़ी शक्ति बनकर शिष्टाचार के रूप में सदा–सर्वदा अनवरत रूप से जग–जीवन को प्राण पोषित व पल्लवित कर रहा है। यही मानव जीवन का एक मात्र सहारा है, जो अनेकता में एकता के भावोंको लिए हुए अनन्त काल से निरन्तर असंख्य चेतनाओं को जोड़ता व सजीव करता चला आ रहा है।

---

१. **मनुष्य और धर्म–दौलतसिंह लोडा 'अरविन्द' पृ.–६२–३.**

१०–प्रणाम स्वानुशासन

विनम्र, निस्पृह, निस्स्वार्थ एवं आत्म–समर्पण की भावना से हाथ जोड़कर किया गया प्रणाम, मानव जीवन में स्वानुशासन प्रकट करनें वाला प्रथम शिष्टाचार है। यदि मानव जीवन के दैनिक व्यवहार में शिष्टाचार जीवित है तो उस व्यक्तिका जीवन सुशासित है। सुशासित (अनुशासित) जीवन में धर्म सुरक्षित होता है। अतः धर्म सुरक्षित है तो मानव जीवन भी सुरक्षित है। जो अनुशासन हीन व्यक्ति है वो भले ही वाचाल क्यों न हो, वह हमेशा मीठा ही बोलेगा इसका कोई निश्चय नहीं, बदलती परिस्थियों में वह कड़ुवा भी बोल सकता है। यदि उसने एक शब्द भी कड़ुवा बोल दिया तो जीवन में पानी फिर जाएगा, अतः आत्मा–नियंत्रण एवं स्वानुशासन के लिए प्रणाम आवश्यक है। अनुशासित जीवन का सुवास एक महकते हुए गुलाब के फूल की तरह फैलता है। इसीलिए अनुशासित जीवन की आधार–शिला ही प्रणाम है।

११–प्रणाम एवं श्री कृष्ण प्रणामी

'प्र' उपसर्ग पूर्वक 'नम्' धातु से प्रणाम शब्द बना हुआ है। प्रणाम का अर्थ होता है नमन करना, नत मस्तक होकर अभिवादन करना, नमस्कार का ढंग, झुकना, नत होना आदि। जिसका

दिल निर्मल है, स्वप्न में भी वह किसी की बुराई नहीं चाहता ऐसे सच्चे दिल से प्रणाम करने वाले ब्रह्ममुनि के आगमन से दशों दिशाओं में वसंत–बहार छा जाती है, मन–मयूर उन्मत्त होकर थिरकने लग जाता है। सब के दिल में आशाएँ–अभिलाषाएँ पुष्पित–व पल्लवित हो उठती हैं, देखते ही देखते वह पल स्वर्ग को धरती में खींच लाता है, यह प्रणाम का प्रभाव व आकर्षण है। प्रणाम करने से प्रसन्नता की लहरें चेहरे पर छा जाती हैं, वह खुद खुश रहता है तथा दूसरे को मुस्कुराहट का दान देता है। प्रणामी के दो अर्थ होतें हैं, १.प्रणाम करने वाला, २.प्रणाम करते समय दी जानेवाली दक्षिणा१ । श्री कृष्ण प्रणामी अर्थात् **"श्री कृष्णं प्रणमितुं शीलमस्य अस्ति सः श्रीकृष्ण प्रणामी "** नित्य निरन्तर अक्षरातीत श्री कृष्ण–पूर्णब्रह्म परमात्मा को प्रणाम करने की आदत रखने वाला भावुक–रसिक व प्रेमी भक्त को श्री कृष्ण प्रणामी कहा जाता है। श्रीकृष्णका संकीर्तन करने से ही कलिकालका दोष मिट जाता है–

कलेर्दोषनिधेर्राजन् अस्ति ह्येको महान् गुणः ।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसंगः परं व्रजेत् ॥ (गरुड़ पुराण–अ. २२३)

श्री कृष्ण प्रणामी का पुनर्जन्म नहीं होता है, क्योंकि चेतनाके विकासके क्रमिक श्रृंखलाकी अंतिम कड़ी पूर्ण मानव ही –'श्री कृष्ण प्रणामी है', जिसका जीवन श्री कृष्ण में समर्पित है वह अक्षरातीत धामधनी श्री कृष्ण में ही सब कुछ देखने की क्षमता रखता है।

एकोऽपि कृष्णस्य कृतः प्रणामो, दशाश्वमेधाऽवभृथेन तुल्यः ।
दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म कृष्णप्रणामी न पुनर्भवाय ॥ (महा. शान्तिपर्व.४७/९२)

एक बार भी शुद्ध व निर्मल मनसे श्री कृष्ण को जो प्रणाम करता है, उसको दश अश्वमेघ यज्ञ करने का फल मिलता है। इतना ही नहीं दश अश्वमेघ यज्ञ करने वाला तो संसार में पुनः जन्म लेता है, किंतु श्री कृष्ण को प्रणाम करने वाला सदा–सर्वदा के लिए संसार बन्धन से छूट जाता है। महामति श्री प्राणनाथजी श्री कृष्ण की महिमा बताते हैं–

पर तोले न आवे एकने, मुख श्रीक्रस्न कहंत ।

मेहेराज कहे मुख ए धन, जो वली रुदे रमंत ॥
चौदे भवन ते जीतियो, धन-धन ए कुलवंत ॥ (तारतम सागर कि. १२७/५,६.)
गो गोटि दानं ग्रहणेषु काशी
प्रयाग गंगाऽयुत कल्प वासः
यज्ञायुंत मेरु सुवर्ण दानं
गोविन्द नाम स्मरणे न तुल्यम् ॥ (गुरुड़ पुरान-८-१२)
यस्मिन्सर्वाणि तेजांसि विलीयन्ते स्वतेजसि ।
तं वदन्ति परे साक्षात्परिपूर्णतमं स्वयम् ॥
परिपूर्णतमः साक्षात्-श्री कृष्णो नान्य एव हि ॥ (गर्ग सं.)

जिस स्वरूप में सम्पूर्ण तेज राशियों का विलय होता है वही सबका आश्रयरूप परिपूर्णतम कहा जाता है। श्री कृष्ण के स्वरूप में सम्पूर्णदेव, विभूति पुरुष और अवतारों का समावेश पाया जाता है, अतः इन्हीं की उपासना मुख्य है॥

पूर्णब्रह्म स्वरूपोऽयं शिशुस्ते मायया महीम् ।
आगत्य भारहरणं कर्ता धात्रा च सेवितः ॥
गोलोकनाथो भगवान्-श्री कृष्णो राधिकापतिः ।
नारायणो यो वैकुण्ठे कमलाकान्त एव च ॥
श्वेतद्वीपनिवासी यः पिता विष्णुश्च सोप्यजः ।
कपिलोऽन्ये तदंशाश्च नरनारायणावृषी ॥
सर्वेषां तेजसां राशि मूर्तिमानागतः किमु । (ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण खंड अ.-१६)

गर्गमुनि यशोदा माता से कहते हैं, कि 'हे यशोदा ! यह श्री कृष्णरूप जो शिशु है साक्षात् पूर्णब्रह्म स्वरूप है एवं इसके स्वरूप में गोलोकी नाथ राधाकृष्ण तथा लक्ष्मीपति नारायण भगवान

तथा श्वेत द्वीप निवासी अविनाशी विष्णु, कपिल तथा अन्य सब अवतारों का अन्तर्भाव है, अतः अब तो यही सबके उपास्य देव है। पुराणों में लिखा है कि–

मधुर मधुरगीतं मङ्गलं मङ्गलानां सकलनिगमवल्ली सत्फलं चित्स्वरूपम् ।
सकृदपि परिगीतं श्रद्धया हेलया वा भृगुवर नरमात्रं तारयेत् कृष्णनाम ॥

हे नारद ! सब मङ्गलों का मङ्गल स्वरूप वेद शास्त्रों का सनातन फल, चिद्घन स्वरूप 'श्री कृष्ण' यह नाम मनुष्य मात्र को भवसागर से तार कर पार कर देता है। चाहे उसे प्रेम से लिया हो अथवा किसी हेय भाव से, श्री कृष्ण का नाम तो मंगलदायक ही होता है।

---

१. शिक्षार्थी हिन्दी शब्द कोश–डॉ. हरदेव बाहरी–५२९

१२–प्रणाम आत्मा की आवाज़

प्रणाम यह पूर्ण शब्द है। यह सचमुच सूत्रात्मक भाव ग्रंथ है। यह विश्व विद्यालय है तथा शांति एवं विश्वास का बीज–मंत्र है। प्रत्येक सर्जन की शक्ति का आद्यस्त्रोत है। यही मानव जीवन का आधार है। तंत्र–मंत्र–यंत्र यज्ञादि साधनाएँ प्रणाम से ही शुरु होती हैं। प्रणाम के बिना किसी भी प्रकार की साधनाएँ अधूरी हैं। अष्ट–सिद्धि नव निधि तथा जीवन में माधुर्यता प्रणाम से ही प्राप्त होती हैं। प्रणाम की ऊँचाई एवं गहराई का कोई थाह नहीं ले सकता क्योंकि यह आत्मा की आवाज़ है।

१३–प्रणाम–जीवन की रूपरेखा

मानव जीवन किसी एक निश्चित लक्ष्य के लिए प्राप्त हुआ है। प्रगति व पुरुषार्थ इसके दो पहिये हैं। शरीर रथ है। इंद्रियाँ इसके घोड़े हैं। मन सारथि है। बुद्धि लगाम है। इस को चलाने वाला रथी स्वयं जीवात्मा है। तथा इसका लक्ष्य परमात्मा है। प्रणाम इस की आवाज़ है। श्री भागवत में कहा गया है–

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरु कर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान्भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ॥

दुर्लभ मनुष्यतन, पृथ्वी, आकाश–पाताल, वन–उप वन, नदी, पर्वत आदि समुचित व्यवस्था, भवपार करने वाला समर्थ गुरु और मेरी भक्ति पाकर भी जो संसार रूपी समुद्र से पार नहीं हो पाता, उसे आत्म–घाती जानो। महामति श्री प्राणनाथजी भी कहतें हैं –यथाः–

वृथा कां निगमो रे, पामी पदारथ चार ।
उत्तम मानखो खंड भरथनो, श्रेष्ठ कुली सिरदार ॥ (तारतम सागर कि. १२५/१)

इस संसार में आकर उत्तम मनुष्य शरीर, नवों खण्डों में श्रेष्ठ भरत–खण्ड, युगोंमें उत्तम कलियुग एवं श्रेष्ठ सद्गुरु ये चार महत्त्वपूर्ण पदार्थ मिले हैं, इनकों क्यों व्यर्थ में गवा रहे हो ? मनुष्य तन प्राप्त करना, तथा ऋषि की इस पावन तपोभूमि–भारत में जन्म लेना यह हमारे लिए दुर्लभ संयोग है–यथाः–

गायन्ति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तु ये भारतभूमिभागे ।
स्वर्गापवर्गस्य फलार्जनाय भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात् ॥ (गरुड़ पुराण. २/१/२७)

देवता भी भारत भूमि की प्रशंसा में गीत गाते हुए कहते हैं–'जो लोग पवित्र भारत की भूमि में जन्म लेकर निवास करते हैं, वे धन्य हैं। देवता भी स्वर्ग एवं अपवर्ग रूप फल की प्राप्ति के लिए पुनः भारत भूमि में मनुष्य रूप में जन्म लेते हैं।

देव दुर्लभ यह जीवन–हिंसा, बेईमानी, छल–कपट और बेरहमी के लिए नहीं है। नफ़रत तथा आलस्य ही जीवन का कब्र है। हम में से अधिकांश लागों ने लड़कपन खेल में खोया, जवानी नींद में सोया, बुढ़ापा आते ही रोया क्या यही हमारी जिन्दगी़ है ? जीवन के चौथेपन में चाहे हमने ७५ वसंत क्यों न पार कर लिया हो, हमें रोना ही क्यों पड़े ? हमें अपने जीवन में–अपने कार्य से संतुष्टि क्यों नहीं है ? कहीं न कहीं, कुछ न कुछ हमारे कार्यकारण में गड़बड़ी तो अवश्य है नहीं तो हम, छोटे–मोटे हर कार्य से संतुष्ट होकर हर पल क्यों नहीं हँस सकते ? हम अपने जीवन में उत्सव क्यों नहीं मना सकते ? धैर्यता रखें। मन को विचलित न करें। हमारी धड़कन में अभी भी काफी दम है। नाड़ी भी सक्रिय है। चले बेताबी और बेसब्री से उपर्युक्त प्रश्नों का हल ढूढ़कर हम अपने जीवन की रूपरेखा तैयार करें। हमें क्या करना है ? कोई न कोई उपाय करें। **अगर इरादें नेक हो और लीक से हटकर समाज के लिए कुछ कर गुजरने का यदि बुलंद हौसला हो तो मुश्किलों के पहाड़ भी किसी का रास्ता नहीं रोक सकते। वहाँ तो चट्टानों से भी दुआएँ फूटती हैं और आँधियों में चिराग जला करते हैं–**

"पी जाओ व्योम को यारों ! अब दुनियाँ से क्या डरना।
उठालो ब्रह्माण्डको हथेली में, न पड़े तुम्हें हाथ मलना॥
थाम लो विराट जन–जीवन को, क्या करेगी अब छलना।
बदल कर दुनियाँ की तक़दीर को फिर अपना दम भरना॥ (श्री प्रकाशानन्द महाराज)

किसी मूल लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सर्व प्रथम उसकी कार्य सूची (Agenda) बनाना बहुत ही जरूरी है। कार्य सूची का प्रारम्भ एवं अन्त यदि प्रणाम से है तो समझ लेना चाहिए कि वह कार्य सफल है क्योंकि प्रणाम ही जीवन की रूपरेखा है। सबसे पलते हम दृढ़ता पूर्वक मन में एक संकल्प धारण करें या किसी अंज़ाम तक पहुँचने के लिए ऊँचे ख्वाब बनाएँ। कुछ न कुछ हमें नया कार्य करना है, इसके लिए हिम्मत जुटाएँ, तत्पश्चात् पवित्र व साहसी मन से उस कार्य का शुभारंभ करें तथा अति शीघ्रतापूर्वक अपनी सारी शक्ति को पूरे मनोयोग के साथ उस कार्य में लगाएँ

। धीरे–धीरे अपनी मंज़िल की ओर आगे बढ़ें । दिन प्रति दिन अपनी गति को तेज करते जाएँ, कार्य शुरु हो जाने पर साधना के राह पर बाधाएँ आ सकती हैं–एक से एक बवंडर उठ खड़े हो सकते हैं–विक्राल समस्याएँ मुँह फैलाए हमें डरा सकती हैं परन्तु हमें धैर्यता नहीं छोड़नी चाहिए । अपने मन को दृढ़ बनाएँ तथा उसे विचलित न होने दें । हृदय में साहस एवं उत्साह रखें । हर चुनौतियों को स्वीकार करते हुए डटकर उसकी सामना करें । अपने इष्टदेव पर विश्वास एवं पूर्ण भरोसा रखें, तथा मन ही मन उसे याद करें । दोनों हाथ जोड़कर विनम्रता पूर्वक उसे प्रणाम करें । प्रणाम के भावरूपी बीज को मस्तिष्क की गहराई पर उतारे अगर हम इतना कर सकते हैं तो सीने पर पत्थर रखकर साहस के वज्रधोष से समस्याओं के विक्राल पहाड़ को भी हम चूर–चूर कर सकेंगे । क्योंकि प्रणाम के अन्दर अतुलनीय ताक़त है । प्रणाम, मात्र शिष्टाचार नहीं है यह तो चेतना का भावमय अत्यंत शक्तिशाली विश्व–व्यापी शक्ति बीज भी है । प्रणाम रहित जीवन कोरा काग़ज़ की तरह होता है । प्रणाम से संस्कारित जीवन अत्यन्त प्रभावशाली रसवर्धक होता है ।

१४–प्रणाम के प्रयोग से अहंकार नष्ट

प्रणाम यह कोई वस्त्र नहीं कि वह पुराना हो जाए और फट जाए तथा फटने पर उसे त्याग दिया जाए, दूधमें पड़ी मक्खि नहीं कि उसे फेंक दिया जाए । प्रणाम को मज़ाक का साधन नहीं बनाना चाहिए यह तो देहधारी चेतन प्राणी के अन्तरात्मा का आनन्दमय आवरण है, यही चेतना को अपने मूल स्वरूप में जोड़ता है, नकारात्मक भाव को सकारात्मक दिशा की तरफ मोड़ता है तथा अहंकार को तोड़ता है । नियमित रूप से प्रणाम करने की आदत हो जाने पर अहंकार नष्ट हो जाता है । जब तक हमारे मन एवं अन्तःकरण तक अहंकार का बीज नहीं समाप्त होता, तब तक हम पूर्ण मानव (श्री कृष्ण प्रणामी) नहीं बन सकते । जब तक पूर्ण मानव नहीं होते, तब तक हम परमतत्त्व (आत्मतत्त्व) को प्राप्त नहीं कर सकते । आत्मतत्त्व का प्रयत्क्ष अनुभव हो जाने के बाद ही पूर्ण ब्रह्म प्राप्ति का दरबाज़ा खुल जाता है । अहंकार यह साधारण चींज नहीं है इसका विस्तार–

५०००००००००००००(पाँच पद्म) योजन तक है। प्रणाम से ही अहंकार धराशायी होता है, अतः प्रणाम करते समय इस बात की जानकारी होनी चाहिए कि हम प्रणाम किसी व्यक्ति के वाह्य अंग को नहीं करते, प्रणाम तो उस चेतन के मूल स्वरूप को किया जाता है जो प्राणी के देह में ओत-प्रोत है विश्व ब्रह्माण्डमें सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप में समाया हुआ है।

त्याग इमानदारी एवं बलिदान जीवन के आभूषण-१५

निजी स्वार्थ के लिए मानव झूठ का सहारा लेता है। वह अपनी कल्पना शक्ति, चातुर्य एवं वाक्छटा से इतनी हवा बाँधता है कि हद से बाहर की बात हो जाती है। परन्तु उसे यह पता नहीं कि उसकी झूठी दलीले वास्तव में उसके ही लिए एक मौत का तोहफ़ा है। झूठ की हाँड़ी फूटते ही उसके वाग्जाल व षड़यन्त्र का वास्तविक स्वरूप जग-जाहिर हो जाता है; अतः अन्त में उसे पछताना ही पड़ेगा। मौत के उफ़ान के सामने उसे स्तब्ध रहना ही पड़ेगा। पता नहीं, सब कुछ जानेते हुए भी मानव क्यों झूठ का सहारा लेता है ? झूठ का सहारा लेकर किया गया धर्म, राजनीति, सेवा तथा संसार का कोई भी कार्य चाहे वह कितना ही बढ़ा क्यों न हो, सबके सब छलावा मात्र है, एक धूर्ततापूर्ण छुछुन्दर का खेल है। मानव महान बनता है परोपकार से,अपनत्त्व की भावना से, शिष्टाचार एवं सुसंस्कार से, सेवा त्याग, परिश्रम तपस्या, ईमानदारी एवं चरित्र निर्माण से। थोथी प्रशंसा आडम्बर पूर्ण कार्य के लिए झूठ का सहारा लेने वाला कभी भी महान नहीं बन सकता।

धर्म परिवर्तन कर श्रेय लेने वाला व्यक्ति कभी भी धर्मवीर नहीं होता। श्रीमद्भगवद्गीता में बताया गया है कि 'अच्छी प्रकार आचरण में लाए हुए दूसरे धर्म से गुण रहित भी अपना धर्म अति उत्तम है। अपने धर्ममें तो मरना भी कल्याण कारक है और दूसरे का धर्म भय को देने वाला है। अगर हमें महान बनना है तो हम सभी कर्मवीर बनें, अपनी-अपनी क्षमता व हैसियत को देखें, हमें क्या करना है, क्या नहीं करना है ? अपनी दिशा का तलाश करें नए क्षितिज को देखें। इस प्रकार का दृष्टिकोण रखने वाला व्यक्ति ईश्वर का प्यारा, सब का सहारा एवं समाज का कर्णधार होता है।

'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः'। (श्रीमद्भगवद्गीता ३.३५)

जिस जाति–बिरादरी में हमारा जन्म हुआ है उसे त्याग कर दूसरे धर्म में अपना रिश्ता जोड़ने से हम सुखी होंगे, हमारी इज्ज़त बढ़ेगी हम शिक्षित कहलाएँगे ऐसी धारणा सब मिथ्या एवं पाखंडपूर्ण है क्योंकि इस से व्यक्ति का स्वाभिमान खत्म हो जाता है। वह अभिमानी हो जाता है। जीवन में जीनेके लिए अभिमान नहीं स्वाभिमान चाहिए। धर्म, जाति का परिर्वतन नहीं मन का परिवर्तन ज़रूरी है। तन तथा कपड़ा का मैला साबुन और पानी से, धन का मैला–दान से एवं मन का मैला प्रभु भजन से दूर होता है। अपने अवगुणों को त्याग दो दूसरे के गुणों को हृदय में धारण करो यह सब से अच्छा तरीका है।

दहकते हुए अंगार पर भले ही हमें क्यों न चलना पड़े, सच्चाई को हमें नहीं छोड़नी चाहिए। कई ऐसे महान व्यक्ति हुए जिन्होंने अपने जीवन में ईमानदारी और सच्चाई को नहीं छोड़ी। यूनान के बड़े दार्शनिक सुकरात ने हलाहल जहर को पी लिया लेकिन सच्चाई को नहीं छोड़ी। ईसाई धर्म के प्रवर्तक–ईसा–मसीह क्रास में लटक गए परन्तु दया प्रेम को नहीं छोड़ा। मीराबाई ने राणा के राजदरबार को त्याग दिया तथा विष का प्याला उठाकर ज़हर पी गई परन्तु श्री कृष्ण की भक्ति से दिल नहीं मोड़ा, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने राष्ट्र के लिए जीवन बलिदान किया लेकिन अहिंसा व्रत को नहीं छोड़ा, श्री प्राणनाथजी ने धर्म–पत्नि फूलबाई को त्याग दिया लेकिन धर्म को नहीं छोड़ा, वीर शिवाजी, महाराणा प्रताप, बुंदेलवासी–राजा चंपतराय, चन्द्रशेखर आज़ाद, सुभाषचन्द्र बोस, वीर बालक अभिमन्यु, वीर बालक बादल, पृथ्वीराज चौहान, हाड़ी रानी, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई आदि कर्म वीर एवं वीरांगनाओं ने राष्ट्र के लिए आत्मा की आहूतियाँ दीं लेकिन देश प्रेम तथा अपने दायित्त्व को नहीं छोड़ा ऐसे महान आत्माओं के श्री चरणों में हम शत्–शत् प्रणाम करते हैं।

१६–प्रणाम परंपराकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

सृष्टि के आदिकाल से अबतक इस पृथ्वी की आयु–"यूरे नियम की मदद से प्रमाणित किए गए वैज्ञानिक आकड़ों के आधार पर देखें तो कम से कम" ३० अरब वर्ष व्यतीत हो चुकी है१. । महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती के कथन अनुसार भारतीय वेदकाल २ अरब वर्ष पुराना है२. । सृष्टि सम्वत के आधार पर हिन्दूधर्म के अध्यात्मवाद का परिष्कृत रूप एक अरब ९७ करोड़ २९ लाख ४९ हजार ५२ वर्ष पुराना है३/४. ।

सृष्टि काल की प्रारंभिक अवस्था से अब तक इस पृथ्वी पर कई सांस्कृतिक परंपराओं का जन्म हुआ है । उन परंपराओं को जन्म देनेवाली प्रमुख संस्कृतियों में–भारत, मेसोपोटेमिया, ग्रीस, चीन, यहूदी, ईजिप्त, रोमन, यूनान, मिस्त्र, एवं बेबिलोन आदि की संस्कृति प्रमुख हैं । इन सभी संस्कृतियों में स्वच्छन्द रूप में अपनी–अपनी परम्पराओंका जन्म हुआ है । न तो परम्पराओंका पार है, न जातियों का । कुछ परम्पराएँ तो अभी भी जीवित है परन्तु जिनमें से अधिकांश परंपराएँ काल के अनन्त प्रवाह में विलीन हो चुकी है, और उन परंपराओं में से जो भी जीवित हैं वे भी शनैः शनैः प्राणहीन होती चली जा रही हैं, जैसे यूनान मिस्त्र बेबिलोन आदि की परंपराएँ, परन्तु उन जीवित परम्पराओं में से भारतीय संस्कृति की कई ऐसी प्रभावशाली परंपराएँ भी हैं जो आज भी प्राणवान्–अत्यंत शक्ति शाली होकर सम्पूर्ण मानव समाज को अपनी ऊर्जा प्रदान कर रही हैं । यही ऊर्जा सम्पन्न परंपरा में श्रेष्ठतम स्थान प्रणाम परंपरा का है ।

'प्रणाम' शिष्टाचार–भारतीय अध्यात्मवाद का सर्व श्रेष्ठ आविष्कार है । पुनर्जन्म, परलोकवास और परमात्मा के अस्तित्त्व का नाम आध्यात्मिक विज्ञान है । अध्यात्मवाद विश्व की सुन्दरतम विभूति है । सुख शान्ति का उद्‌गम, सामाजिक और धार्मिक जीवन का स्रोत, सदाचार एवं आदर्श की कसौटी है । जीवन का पुरुषार्थ इसी के द्वारा प्राप्त होता है । ईसा, मूसा, मुहम्मद आदि से लेकर सवालाख पैगम्वरों, विश्व के दार्शनिकों, क्रिश्चियन, यहूदी, नासारे, मुसलमान आदि ने अपने–अपने मजहबी ग्रन्थों में भारतीय अध्यात्म वाद की छाया ली३ ।

---

(१) सचित्र विश्व कोश–सं–डॉ. बाल कृष्ण, प्रका.–राजपाल एण्ड सन्ज कश्मीरी गेट दिल्ली–पृ.७७, ५५, ५६ (२) दुनिया में रहना किस तरह पृ–३१ (३.४)विराटपट दर्शन–ले. पं. कृष्णदत्त शर्मा. सूरि' कानपुर पृ–१०, ४५.

दृश्यमान जगत् सनातन नहीं है, क्योंकि यह परिवर्तनशील है। प्रणाम करने की परम्परा परमधाम से प्रचलित होने से यह परम्परा सनातन है क्योंकि पूर्णब्रह्म परमात्मा सनातन है। सनातन का अर्थ होता है–जो कभी भी (भूत–भविष्य–वर्तमान तीनों काल में) पुराना न हो जए, हमेशा नया ही रहे। न तो उसमे घटबढ़ हो और न ही उसमें परिवर्तन, वह हमेशा नया ही दिखे।'नित–नित नवले रङ्ग'। पूर्णब्रह्म परमात्मा–अक्षरातीत श्री कृष्ण सनातन सर्वोत्तम पुरुष हैं। वह सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। उनकी प्रेरणासे नश्वर ब्रह्माण्डों की रचना करने वाले अक्षर भगवान् भी सनातन हैं क्योंकि वे अक्षरातीत के सदंश–बाल स्वभाव अर्थात् बाल लीला के स्वरूप हैं। जो आखों की पलकके पाव पल में अनन्त नश्वर ब्रह्माण्डों की रचना करते हैं तथा उन्हें मिटा भी देते हैं–
'कोटि ब्रह्माण्ड नजरों में आवे, छिनमें देखके पलमें उड़ावें।

अक्षर भववान् अक्षरधाम में रहते हैं। पच्चीस पक्ष परमधाम के अन्तर्गत अक्षर धाम भी आता है। वह परंधाम के रंगमहल से ९ लाख कोस की दूरी पर स्थित है। अक्षर भगवान् नियमित रूप से श्री जमुनाजी नदी के सातों घाटों को पार कर रंग महलके विशाल प्रांगण–चाँदनी चौक में खड़े

होकर नित्य विनम्रतापूर्वक दोनों हाथों को जोड़कर पूर्णब्रह्म परमात्मा अनादी अक्षरातीत श्री राजजी को प्रणाम करके अपने धाम को लौटते हैं–

"इन समे भगवान जी इत, दरसन को आवे नित" ॥
"झरोखे सामी नजर करें, परनाम करके पीछे फिरे" ॥
मेरे खसम का नूर है, नूर अंग नूरजलाल ।
सो आवत दायम दीदार को, मेरा खसम नूरजमाल ॥ (ता. सागर परि.३/९७–९८, २९/९७)
कूटस्थ एव तद्धाम्नि कृष्णदर्शनलालसः ।
नित्यं प्रयाति परमं प्रेमपूरितमानसः ॥ (माहे. तन्त्र.२३/१२)

परमधाम के रंगमल के मूल मिलावा में कञ्चन रंग के देदीप्यमान–दिव्य सिंहासन उपर विराजमान धामधनी श्रीराजश्यामाजी (शुद्ध सनातन सच्चिदानन्द स्वरूप अक्षरातीत श्रीकृष्ण एवं उनकी आह्लादिनी शक्ति श्रीश्यामाजी) के श्री युगल चरण कमलों में ब्रह्मात्माएँ प्रातः, दोपहर, अपराह्न, संध्या एवं शयनकाल के समय नित्य प्रणाम करती हैं :–

कै सीधियां सलकतियां, कै विध आवें जो चलतियां ।
सखी एक दूजी के आगे, आए–आए के चरनों लागे ॥
"उछरंगतियाँ आवे आगे", श्री राजश्यामाजी के पाँव लागे ।
इतहीं से आज्ञा करी, पाँव लाग सेज्या दिल धरी ।
दई आज्ञा सबों बड़ भागी, आइयां मंदिर चरनों लागी ॥
बारे हजार–चालीस जुत्थ सब सखियाँ आय–आय के "श्रीराज,
श्रीठकुराणीजी के चरनों लागी" ॥ (सेवापूजा–तीजी भोम, पौढ़ावनी, म. रात्री स्वरूप .)

सृष्टि के पूर्व असत् नहीं था और सत् भी नहीं था। परमाणु नहीं थे, परम सूक्ष्म आकाश भी नहीं था। अगाध और गहन जल भी नहीं था। तब किसके लिए कौन से सुख के लिए आवरण सा छा रहा था ? उस समय मृत्यु नहीं थी, अमृत भी नहीं था। रात्री और दिवस की संज्ञा भी नहीं थी।

केवल अपनी शक्ति से वायु के विना ही श्वासोच्छवास लेता वही एक परमात्मा था। उससे ही आकाश आदि तत्त्व उत्पन्न हुए तथा उसकी प्रेरणा (इच्छा) से सृष्टि की रचना हुई है–

एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः (तैत्तिरीय ब्रह्मानन्दवल्ली)

आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीन्नान्यत्किंचन मिषत्।

स ईक्षत लोकान्नु सृजा इति। स इमांल्लोकान सृजत॥ (ऐतरेयोपनिषद्–१–१)

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्योमा परो यत्।

किमावरीवः कुहकस्य शर्म्मन्नम्भः किमासीद् गहनं गंभीरम्॥

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हिन रात्रया अह्नासीत् प्रकेतः।

अनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्नापरः किञ्चनाऽऽस॥

(ऋग्वेद नासदीय सूक्त ८–७–१७)

उपर्युक्त शास्त्र प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि विश्व रचना का उद्गम ब्रह्मकी चेतना के द्वारा हुआ है। अतः पूजा चेतन की ही होनी चाहिए जड़ की नहीं। उस अविनाशी ब्रह्म ने इस जगत् को रचकर स्वयं भी अन्तर्यामी रूप से इसमें प्रवेश किया–

तत् सृष्ट्वा तदेवानु प्राविशत् (तैत्तिरीय ब्रह्म अनुवाक–६)

दृश्यमान यह ब्रह्माण्ड ब्रह्मके अन्तःकरण की समष्टि में एक परमाणु तुल्य अवस्थित है। हमें ही महान–सा प्रतीत होता है। जिस प्रकार जल में तरङ्ग उठा करते हैं और पुनः जल के जल में ही समा जाते हैं। जिस प्रकार महा पवन में असंख्य रजकण उड़–उड़ कर समा जाते हैं, उसी प्रकार असंख्य ब्रह्माण्ड उड़कर अपने मूल स्वरूप कारण ब्रह्म में समाया करते हैं। सूर्योदय होने पर घर में त्रसरेणुओं की संख्या का पारावार नहीं रहता। उसी प्रकार विस्तृत ब्रह्म के स्वरूप में ब्रह्माण्ड रूप त्रसरेणुओं की संख्या नहीं है :–

यथा तरङ्गा जलधौ तथेमाः सृष्टयःपरे।

उत्पत्त्योत्पत्त्य लीयन्ते रजांसीव महानिले॥

यथा सूर्योदये गेहे भ्रमन्ति त्रसरेणवः।

तथेमे परमाकाशे ब्रह्माण्ड त्रसरेणवः ॥ (योगवासिष्ठःउत्पत्ति प्रकरण २९)
संख्या चेद्रजसामस्ति न विश्वानां कदाचन ।
ब्रह्म विष्णु शिवादीनां तथा संख्यान विद्यते ॥ (देवी भागवत ८–३–७)
लक्ष्यन्तेऽन्तर्गताश्चान्ये कोटिशो ह्यण्डराशयः ।
तमाहुरक्षरं ब्रह्म सर्वकारण कारणम् ॥ (भागवत ३–११)

धूलि के कणों को कदाचित् गिना भी जा सके परन्तु असंख्य ब्रह्माण्डों के उदय–लय की संख्या नहीं हो सकती । जिसके स्वरूप में प्रतिक्षण करोड़ों ब्रह्माण्डों का उदय–लय लक्षित होता है, सब कारणोंके कारण उसको अक्षर ब्रह्म कहते हैं जो पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्रीकृष्ण को नित्य प्रणाम करते हैं । आत्मा मन एवं हृदय को निर्मल करनेके लिए नित्य परमधामका वर्णन करना तथा श्री राजश्यामाजी के चरणोंमें ध्यान लगाना यह सौभाग्यशाली आत्मा का लक्षण है–
निशदिन ग्रहिये प्रेम सों, श्री युगल स्वरूप के चरन ।
निर्मल होना याही सो, और धाम वरनन ॥

प्रणाम परम्परा के सन्दर्भ में इस परम्परा का कायाकल्प करने वाले सद्गुरु श्री निजानन्द स्वामी श्री देवचन्द्रजी महाराज के जीवन वृत्त एवं उनकी आत्मिक खोज यात्रा का अवगाहन करना नितान्त आवश्क है ।

"पूर्णब्रह्मकल्प–अनन्त विभूषित शुद्ध सनातन श्री कृष्ण प्रणामी धर्म– निजानन्द सम्प्रदाय" के प्रणेता, युग दृष्टा सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी महाराज (वि.सं.१६३८ से १७१२) ने वीर प्रसविनी शौर्यभूमि राजस्थान के मारवाड़ क्षेत्रान्तर्गत उमरकोट (अमरकोट) गाँव में कायस्थ कुलके पवित्र दंपति–मतु महेता की धर्म–पत्नी सुशील नारी माता कुँवरबाई की कोख से आश्विन शुक्ल चतुर्दशी के दिन जन्म लिया । मतु महेता का इकलौता लाड़ला–होनहार पुत्र इस 'श्री देवचन्द्र' ने आत्मोद्धार एवं विश्व कल्याण के लिए आत्मिक खोज यात्रा शुरू की । ' होनहार बिरवा' के होते चिकने पात'

की तरह बाल्यकाल में ही श्री देवचन्द्रजीके चरित्रमें एक अलौकिक व विलक्षण प्रतिभा झलकने लगीथी। उनकी कुशाग्र बुद्धि एवं बाल सुलभ हृदयमें उभरते अद्‌भुत प्रश्नों की अभिव्यक्ति से स्थानीय जनमानस अत्यन्त प्रभावित हुआ। सभी सन्त विद्वान एवं भक्तजन आश्चर्य चकित होकर कहने लगे कि यह साड़े दो हाथ लम्बी देवचन्द्र रूप मानव आकृति में कौन सी अदृश्य शक्ति छुपी हुई है ? सच में यह मानव है कि देवता ?

श्री देवचन्द्रजी की नियमित दिनचर्या की महत्त्वपूर्ण कड़ी यह थी कि ईश्वर को अर्पण किये बिना वे किसी भी प्रकार अन्न जल ग्रहण नहीं करते थे। प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त में उठकर शौचादि क्रिया से निवृत्त होकर ईश्वर का ध्यान लगाना, भजन भक्ति में सदा लीन रहना, सांसारिक विषय वासना से दूर रहना यह उनकी नित्य की दिनचर्या थी। वे अत्यन्त भावुक थे, ज्ञान चर्चा में उनका हृदय गद्‌गद हो जाता था। इसीलिए वे बाल्यअवस्था से ही साधु-सन्तों विद्वानों तथा भक्त जनों की सोहबत के बिना नहीं रह सकते थे। उन सभी सन्त जनों से अकसर वे आत्म-जिज्ञासा के रूप में प्रश्न किया करते थे।"१६ वर्ष की अवस्था में गृह त्याग कर परम सत्य की खोज में वे कच्छ में विचरण करने लगे। उन के मन में मैं कौन हूँ, यह दृश्यमान जगत् क्या है, इसके रचयिता परमात्मा कहाँ रहते हैं, उनके साथ मेरा क्या सम्बन्ध है, यह मानव शरीर छूट जाने के बाद जीव कहाँ जाकर ठहरता है, जीव, जीव-आत्मा, ईश्वर एवं आत्मा का परमात्मा के साथ कैसा सम्बन्ध है, पूर्ण ब्रह्म परमात्मा साकार है कि निराकार अथवा साकार-निराकार से पर है, परमात्मा एक है कि अनेक ? आदि जिज्ञासाएँ उभरने लगी थीं। इन सभी जिज्ञासाओं को शान्त करने के लिए वे दश वर्ष पर्यन्त कच्छ के विभिन्न धर्म स्थानों में विचरण कर राधा वल्लभी सम्प्रदाय के मूर्धन्य विद्वान संत हरिदास जी के सम्पर्क में आए तथा दीक्षा लेकर बाल मुकुन्दजीकी भक्तिमें लीन हुए। परन्तु वहाँ उनकी आत्म संतुष्टि पूर्ण रूप से नहीं हुई अतः पुनः विविध स्थलोंमें विचरण करते हुए सौराष्ट्र गुजरातकी पवित्र भूमि जामनगर पहुँचे।"

जामनगर में भागवत रस मर्मज्ञ–प्रकाण्ड विद्वान श्री कानजी भट्टके श्री मुखारविंद से निष्ठाबन्ध १४ वर्ष पर्यन्त सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीने श्रीमद्भागवत कथाका रसपान किया। वहाँ उनकी देह कसौटी हुई वे बहुत बिमार पड़ गए परन्तु उन्होंने कथा श्रवण में भंग नहीं किया। कथा सुनते–सुनते एक दिन ब्रह्म मुहूर्त के बाद करीब नौ बजे प्रातः काल श्यामजी के मंदिर में उनकी सुरत परब्रह्म परमात्मा के स्वरूपमें लगगई। उनके शरीर में रोमांच हुआ तथा उनके हृदय में अत्याधिक भावावेश होने लगा, उसी समय उन्होंने अनादि अक्षरातीत श्री कृष्ण के युवा स्वरूप का साक्षात् दर्शन किया। क्षर, अक्षर तथा अपने मूल अक्षरातीत स्वरूप का स्पष्टीकरण करते हुए उस पूर्णब्रह्म स्वरूप श्री कृष्ण ने स्वमुख से सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी को पाताल से लेकर परमधाम तक ज्ञान देकर परमधाम की लीलाओं का रहस्य समझाते हुए कहा कि परमधाम की ब्रह्मात्माएँ इस नश्वर जगत् का खेल देखने के लिए सूरता के रूप में इस जगत् में अवतरित हुई हैं। तथा इस जगत् में आकर अपने मूल स्वरूप को भूल गई हैं, तुम भी अपने मूल–परमात्मा स्वरूपको भूल चूके हो। तुम्हारी परात्मा स्वरूप का नाम सुन्दरबाई है। तुम मेरी आनन्द अंग आह्लादिनी शक्ति 'श्यामाजी' के अवतार हो। मेरा नाम श्री कृष्ण है। मैं नश्वर ब्रह्माण्ड क्षर तथा कूटस्थ अक्षर से परे अक्षरातीत सच्चिदानन्द स्वरूप तुम्हारा स्वामी हूँ। मेरे सदंश अक्षर भगवान स्वप्न में मन से अनन्त नश्वर ब्रह्माण्ड (क्षर ब्रह्माण्ड) की रचना तथा प्रलय करते हैं। मेरे निर्देशन का पालन करते हुए अक्षर भगवान की प्रेरणा से निर्मित यह कालमाया का ब्रह्माण्ड भी नश्वर होनेसे अखण्ड नहीं है। तुम परमधाम की सभी १२ हजार ब्रह्म अंगनाएँ इसी नश्वर ब्रह्माण्ड में ११ वर्ष और ५२ दिन तक व्रज लीला करके श्री कृष्ण की वंशी की आवाज़ सुनते ही इस पांचभौतिक शरीर का त्याग तथा सूक्ष्म शरीर धारण कर श्री कृष्ण के साथ रास लीला करने योगमाया के ब्रह्माण्ड में गई। योगमाया के ब्रह्माण्ड में प्रवेश करते ही यह कालमाया का ब्रह्माण्ड लय होगया। उधर योगमाया के ब्रह्माण्ड में श्री कृष्ण के साथ रास लीला खेलते–खेलते श्री कृष्णजी अन्तर्ध्यान हुए तो तुम सभी ब्रह्मांगनाएँ श्री कृष्णजी के वियोग में तड़पने लगी। पुनः श्री कृष्णजी प्रकट हुए फिर से रास लीलाएँ हुई। सभी ने जमुनाजी में स्नान किया। वन के फलोंका भोग श्रीकृष्णको लगाया तत्पश्चात् सभीने प्रसाद ग्रहण किया पुनः सभी ब्रह्मांगनाएँ

मिलकर एक ही अवाज़ में कहने लगी कि हे प्राण प्रितम ! हमें उस अखण्ड घर में ले जाइए जहाँ हमें आप से जुदा न होना पड़े । ऐसा ही हुआ श्रीकृष्णकी कृपासे सभी ब्रह्मात्माओं की सुरता परमधाम मूलमिलावा में पहुँची परन्तु पूर्ण जागृत न हो सकी । क्योंकि परमधाम मूलमिलावा में मायाका खेल दिखाने के पूर्व श्री राजजीने ब्रह्मात्माओंको सचेत किया था कि तुम सभी मेरी आत्माएँ (अंगनाएँ) संसार में जाकर नश्वर खेल देखने लगजाओगी तो मेरे मूल स्वरूप को भूल जाओगी । परमधाम मूलमिलावाका भान नहीं रहेगा, तुम खुद अपने स्वरूप को भी भूल जाओगी तथा नश्वर चींज आग, पानी, पत्थर आदि की पूजा करने लगजाओगी और तुम्हें जागृत करने के लिए सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी एवं श्री प्राणनाथ बनकर मुझे ही आना पड़ेगा । शास्त्रों के महत्त्वपूर्ण प्रमाण दे–दे कर मैं तुम्हें जगाउँगा तथा मेरे मूल स्वरूप की याद दिलाउँगा फिर भी तुम अंगनाएँ जागृत नहीं हो पाओगी । अतः मैं मानिसक पूजा द्वारा तुम्हारे मन को मेरे स्वरूप में केन्द्रित करके पवित्र बनाउँगा । श्री कृष्ण के चरणों में प्रणाम करने सिखाउँगा, नित्य तारतम मंत्र का जाप कराउँगा तभी तुम्हारे दिल में विश्वास की भावना जागृत होगी और माया के मोह का पर्दा तुम्हारे दिलसे सदाके लिए उठ जाएगा । अतः पुनः अपने मूलमिलावा परमधामको याद करने लग जाओगी । विश्व के सभी प्राणियों एवं देवि देवताओं के प्रति तुम्हारा सद् व्यवहार होगा तथा सब के कल्याण के लिए सहृदयता पूर्वक 'आत्मावत् सर्व भूतेषु' की भावनासे सबको प्रणाम करोगी परन्तु मूल पूजा एवं सुरत अपने धनी के चरणों में ही होगी ।

व्रज एवं रास मण्डल में किया गया शर्त पूर्ण नहीं होने से पूर्ण मानसिकता के साथ सभी आत्माएँ जागृत नहीं हो सकी । सात्त्विकी स्वभाव की आत्माओं की माया के खेल देखने की प्रवल इच्छा व्रज मण्डल में ही पूर्ण हुई । राजसी स्वभाव की आत्माओं की इच्छा रास लीला देखकर श्रीकृष्ण के वियोग लीला के समय पूर्ण हुई । परन्तु तामसी स्वभावकी आत्माओंकी इच्छा अधुरी रही अतः पुनः तीसरी बार इस काल माया ब्रह्माण्ड की रचना हुई । इस ब्रह्माण्ड में मेरे ही निर्देशन पर श्यामाजी की अवतार के रूप में तुम सुन्दरबाई देवचन्द्र पुरुष रूप में आए हो, इन्द्रावती बाई

प्राणनाथ के रूप में अवतरित हुई है तथा सभी ब्रह्मात्माएँ अलग–अलग जाति अलग–अलग वेशभूषा में अवतरित हुई हैं। उन सभी ब्रह्मात्माओं को संगठित करके सबको जागृत कर परमधामका अनुभव कराने के लिए तारतम ज्ञान के साथ–साथ तारतम्य महामन्त्र प्रदान कर मैं तुम्हें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण दायित्त्व सौंपता हूँ ऐसा कहकर प्राण प्रियतम अक्षरातीत श्रीकृष्ण ने सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी को षोड़शाक्षर ब्रह्मतारक महामंत्र–"निजनाम श्री कृष्णजी अनादि अक्षरातीत" प्रदान किया। सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी (निजानन्द स्वामी) ने श्री कृष्ण के श्री चरणों में प्रेमाश्रु सिंचित करते हुए अपना सिर झुकाकर विनम्र तथा गद्गद भाव से साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम किया, तभीसे श्रीकृष्णजी, सद्गुरु श्री निजानन्द स्वामी श्रीदेवचन्द्रजी महाराजके हृदयधाममें सदाके लिए विराजमान हुए। वस, यहीं से अनादिकाल से चलती आ रही प्रणाम परंपरा का पुनः कायाकल्प हुआ। वि. सं. १६८७ में सद्गुरु निजानन्द स्वामी श्री देवचन्द्रजी महाराज ने अपने पवित्र कर कमलों द्वारा नवानगर (जामनगर) सौराष्ट्र गुजरात में आद्यधर्मपीठ की स्थापना कर उसे 'श्री ५ नवतनपुरी धाम' का नामाभिधान किया तथा प्रणाम का पुनः सूत्रपात किया। उनके सत्संग चर्चा में दिन–प्रतिदिन सत्संग प्रेमी भक्त जनोंकी अभिवृद्धि होती गई। अनेक आत्माओं में जागृति आई। ऐसी महानात्माओं में जामनगर के तात्कालीन मन्त्री श्री केशव राय के सुपुत्र श्री महेराजका स्थान सर्वोच्च है। वे कालान्तर में महामति प्राणनाथजी के नाम से प्रसिद्ध हुए तथा हरिद्वार के महांकुम्भ मेले के अवसर पर वि.सं. १७३५ में भारत के मूर्धन्य मनीषि गण तथा सभी सप्प्रदाय के नेतृत्त्व प्रदान करने वाले सन्त जनोंने महामति श्री प्राणनाथजी को "श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक अवतार के रूप में घोषणा करते हुए उपयुक्त नामाभिधान कर उन्हें सम्मानित किया।

हिन्दू धर्म की सनातन परंपरा में वैदिक युग से ही शिष्टाचार के रूप में प्रणाम का प्रयोग यत्र तत्र किया गया है :–

नमो बृहद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवाभ्यो नमो आशितेभ्यः। (ऋग्वेद)

'नमः सखीभ्यः पूर्व सद्भ्यो नमः साकन्निषेभ्यः।'(सामवेद)

वेदों में बताया है कि छोटे बड़े का भेद छोड़कर परस्पर प्रणाम करना चाहिए। स्त्री वर्ग– सखी सहेलियों को भी परस्पर प्रणाम करना चाहिए। पूर्वजोंको समान उम्र वाला हो या वृद्धों सहपाठियों या मित्र मण्डलों सभी को परस्पर प्रणाम करना चाहिए। परस्पर पूर्णतः सौमनस्य और सहयोग की भावना से एक मन होकर रहना चाहिए।

प्राचीन भारत के ऋषि, महर्षि, तत्त्वदर्शी एवं उपनिषद् काल में संन्यासी जन भी परस्पर अभिवादन के रूप में प्रणाम का ही प्रयोग करते थे। यथा :–

"इदानीं त्वां रघुश्रेष्ठ प्रणमामि मुहुर्मुहुः"। (मुक्तिको.उ.)

"प्रणमेद् दण्डवद् भूमावाचाण्डालगोखरम्"। (याज्ञवल्क्य.उ.)

सारस्वत व्याकरणके प्रणेता अनुभूति स्वरूपाचार्यने मंगला चरणमें प्रणाम शब्दका प्रयोग किया है–

"प्रणम्य परमात्मानं बालधी वृद्धि सिद्धये"१ ॥

इस से भी यह विदित होता है कि सूत्र काल में प्रणाम का ही व्यवहार था। सूत्र काल को करीबन ५ हजार वर्ष पुराना माना गया है२। पौराणिक काल में भी प्रणाम करने की प्रथा थी। ब्रह्मलोक से आए हुए नारदजी को वसुदेवजी ने उठकर प्रणाम कर पूजन किया। यथाः–

अथ जगाम भगवन्देवर्षि ब्रह्मलोकतः।

उत्थाय तं प्रणम्यासौ वसुदेवोऽभ्यपूजयत्॥ (देवी भागवत. म.अ.२)

राम चरितमानसके रचयिता संत तुलसीदास राम चरितमानस के पात्रोंका जहाँ कहीं भी परस्पर मिलाप कराते हैं प्रणामके साथ शिष्टाचार दृष्टि गोचर होता है–

"सीयराममय सब जग जानी, करउँ प्रनाम जोरि युग पानी"।

"पितु समेत लै लै निजनामा, लगे करन सब दण्ड प्रणाम"॥ (राम चरितमानस.१/८/२)

भगवान् ब्रह्म, विष्णु ,महेश एक दूसरे का अभिवादन करते समय प्रणाम का ही उपयोग करते हैं। देवी –देवता , इन्द्र, वरुण , यम , कुवेर आदि सभी देवगण प्रणाम का ही उपयोग करते हैं। विष्णु भगवान् के चौबीस अवतार – राम , कृष्ण , परशुराम , ऋषभदेव , नृसिंह भगवान आदि सभी ने प्रणाम का ही प्रयोग किया है। नारायण , अक्षर भगवान् को प्रणाम करते हैं। अक्षर भगवान् भी अक्षरातीतको प्रणाम करते हैं। इस तरह प्रणामका व्यापक प्रयोग हुआ है, अतः भारतीय संतों ऋषि–महर्षियों, विद्वानों सभीने प्रणामको ही अत्याधिक महत्त्व दिया है। मनुस्मृतिमें तो स्पस्ट लिखा है कि पूर्वजों को ध्यान कर माता–पिता एवं गुरु को साक्षात् ब्रह्म स्वरूप मानकर उनके श्री चरणों में नतमस्तक होकर प्रणाम करने से चार पुरुषार्थ प्राप्त होते हैं। आयु–विद्या, यश और बल–

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ॥ (मनु.स्मृति २/२१)

मनुजी तो स्पष्ट रूप में लिखते हैं कि प्रणाम के बदले प्रणाम ही करना चाहिए। प्रणाम के बदले जो प्रणाम करना नहीं जानता वह तो शूद्र तुल्य है उसे प्रणाम मत करो क्योंकि उसमें आत्मबल नहीं होने से चार पुरुषार्थ प्राप्त नहीं होते३ ।

"यो न वेत्त्यभिवादाय विप्रः प्रत्यभिवादनम् ।
नाभिवाद्यः स विदुषा यथा शूद्रस्तथैव सः" ॥

वेद, उपनिषद्, शास्त्र–पुराणों पर सूक्ष्म दृष्टिपात करें तो विदित होगा कि प्रणाम के बदले प्रणाम ही बोलना चाहिए। जो विनय पूर्वक प्रणाम करता है, वह प्रणामी है। दोनों हाथों को जोड़कर सिरको झुकाकर सद्भावना पूर्वक शुद्ध मन से, अति सरलतासे एक दूसरेको प्रणाम करना चाहिए। घी और शहद से भी अधिक स्वादिष्ट और मधुर वचन से प्रणाम की ध्वनि मुँह से निकलनी चाहिए४ । खुद खुश और हँसमुख रहकर दूसरों को भी खुश करना ही प्रणाम है। प्रणाम करने पर स्वतः आशीर्वाद प्राप्त हो जाता है। प्रणाम करने वाला प्रणामी कहलाता है अर्थात् जो

प्रणामी है (पूर्णमानव है) वह प्रणाम करता है। भाषा जाति, देश, काल सभ्यता के भेद के कारण प्रणाम करने का तौर तरीका अलग–अलग हो सकता है। वह सभी अपनी–अपनी मान्यता के उपर निर्भर करता है। भाषा एवं धारणा में भ्रमित नहीं होना चाहिए विश्व में शिष्टाचार सम्बन्धि जितने भी घटक हैं वे सभी प्रणाम का ही अनुकरण करते हैं परन्तु राजपथ तो प्रणाम ही है। जैसे– राम–राम, जय सियाराम, जय बजरंग बली, हरि ॐ, नमोनारायण, पधारो, बम–बम भोले, हरिबोल, वन्दे मातरम्, खुरंजरी, ॐ शान्ति, जय महाराज, जय गुरुदेव जय श्री कृष्ण, सलाम, अलैकुम५, आदेश, सत श्री अकाल, जय जिनेन्द्र, जय ईसु–प्रेराइजदलॉर्ड, जय महादेव, नमस्ते, तोस्तकम्, वंदनं, नमो नमः, नमस्कार, अलखनिरंजन, जय मातादी, साहेब वन्दगी, जदौ, हरि–हरि, जय स्वामी नाथ, जय स्वामी नारायण, सु प्रभातम्, गुड मार्निंग, खुदा हाफिस, वॉय–वॉय, टा–टा आदि सभी घटकों की जननी प्रणाम ही है। प्रणाम, मृतसंजीवनीवटी की तरह है जिसमें अनन्त जीवन की आस्था जुड़ी हुई है। अतः प्रणाम ही हमारे जीवन की साधना का प्रमुख शिष्टाचार है।

कलियुग–द्वापरयुग, त्रेतायुग एवं सतयुग इन चारों युगों में प्रणाम का सिलसिला अनवरत रूप से चलता ही आ रहा है। व्रज की गोपियों ने अपने प्राणवल्लभ श्री कृष्ण को प्राप्त करने के लिए परा प्रेम लक्षणा अनन्य भक्ति का सहारा लिया परन्तु भक्ति साधना में प्रथम शिष्टाचार के रूप में प्रणाम को ही उन्होंने प्राथमिकता दी। महामति श्री प्राणनाथजी तारतम वाणी में बताते हैं। यथा :–

दई प्रदखिणा अति घणी, साथे कीधा दंडवत परनाम।
हवे करसु रामत रंगे तणी, अने भाजसु हैडानी हाम॥ (रास. प्र. ८/५०)

ब्रह्मसृष्टि–धर्मप्राण सुन्दरसाथ की मनोकामनाएँ पूर्ण करने के लिए श्री राजजी की प्रार्थना के रूप में 'प्रणाम' को ही महामति श्री प्राणनाथजी ने प्रार्थना का आधार बनाया। यथाः– **दई प्रदखिणां अति घणी, करुं दण्डवत परणाम।**
सहु साथना मनोरथ पूरजो, मारा धणी श्री धाम॥ (रास. प्र. १/८३)
करी प्रणाम लागुं चरणे, सेवा करीस हुँ वालापण घणे।

दंडवत करुं जीवने मन, दऊं प्रदखिणा रात ने दिन ॥ (प्रकाश. गु. प्र. १०/२५)
'अखंड दंडवत करुं प्रणाम, हैडे भीडीने भाजुं हाम' । (प्रकाश. गु. प्र. १९/१)

तपस्वी, दानशील, यशस्वी, मन्त्र जाप करने वाले तथा सदाचारी लोग अपना तप आदि जिसको समर्पण किए बिना कल्याण की प्राप्ति नहीं कर सकते, उन मङ्गल यज्ञ वाले भगवान् को पुनः पुनः प्रणाम करता हूँ–

तपस्विनो दानपरा यशस्विनो,
मनस्विनो मन्त्रविदः सुमङ्गलाः ।
क्षेमं न विन्दन्ति विना यदर्पणं,
तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥ (श्रीमद्भागवत–२/४/१७)

प्रणाम को ऐतिहासिक सन्दर्भ में विश्लेषण करना यह कोई सहज कार्य नहीं है । इसके मानदण्ड एवं मूल्यों की व्याख्या करने में आज तक की सांस्कृतिक अवधारणात्मक चेतना भी पूर्ण नहीं है क्योंकि प्रणाम हमारे आदर्श जीवन का विशिष्ट शिष्टाचार है । जीवन की सर्वोच्च कल्पना है । लोकधर्म एवं आत्मधर्म का अविभाज्य अंग है । प्रणाम शब्द की सर्व व्यापक अवधारणा परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप में विश्व के प्रत्येक सभ्यता के अन्दर विद्यमान है चाहे वह पूर्वी–हिन्दू सभ्यता हो या पश्चिमी ईसाई व इसलामी सभ्यता । किसी न किसी प्रकार से एक दूसरे को करीब से देखना, उस को अपना बनाने के लिए कोशिश करना , उसमें आत्मीयता का भाव जागृत करना यह प्रत्येक सभ्यता के जेहेन में है । प्रणाम भाव जागरण का महामंत्र है । यह जीवन मंदिर का राज–द्वार है जो मंगलमय पथ पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है । यह जीवन को सच में बदल ते हुए भय, घृणा, पाप कर्म, एवं असत् व्यवहार से हमें बचाता है । प्रणाम मर्यादा की वह नींव है, जो जीवन में समरसता प्रदान करता है तथा अनेक आत्म घाती परिस्थितियों से लड़ने की क्षमता रखता है । यही हमारे जीवन का प्राण व भाव पोषक तत्त्व है, पूर्ण व परिपक्व जीवन का पुरुषार्थ है । भारतीय जीवन दर्शन की गौरवान्वित परंपरा की पहिचान ही प्रणाम है । इस जीवित परंपरा की पहिचान को

बनाए रखना जीवन के मूल ध्येय तक पहुँचकर आत्मसाक्षात्कार करना तथा विश्व शान्ति एवं एकता के महा संकल्प का चरित्रार्थ करना "श्री कृष्ण प्रणामी धर्म–निजानन्द सम्प्रदाय" का मूल उद्देश्य रहा है। सद्गुरु एवं श्री कृष्णजी की कृपा के बिना कोई भी कार्य सफल नहीं हो सकता है। अतः उनके श्री चरणों में पुनः पुनः प्रणाम करते हैं।

(१/२/३) विराट पट दर्शन–ले. पं. कृष्णदत्त शर्म 'सूरि' कानपुर पृ–१०,४१२,४१४ ॥
(४) वेदों के उपदेश, सम्पा–डॉ. उमेशपुरी ज्ञानेश्वर, रणधीर प्रकाशन हरिद्वार–पृ.१७
(५) महाजाति गुजराती–ले. चन्द्रकांत बक्षी–पृ.–६४

१७–प्रणाम का चमत्कार

ताज़गी के साथ हर दिन की शुरूआत प्रणाम से हो तो चमत्कार होगा। प्रणाम मानव जीवन का सर्वश्रेष्ठ आचार है। जब हम आपस में एक दूसरे को प्रणाम करते हैं, वह पल हमारे लिए एक स्वर्णिम पल है। उस समय हमें नई बहार के साथ दिल के गहराई को छू लेने का एहसास होता है। एक चुम्बकीय चेतना, तत्क्षण नवोदित दिल के भाव को छू लेती है। एक रोमांच भरी मुसकान व ताज़गी भरा पल क्या नहीं कर सकता यह तो दिल से दिल को प्रणाम करने वाले भावुक रसिक व प्रेमी जन ही अनुभव कर सकते हैं–

चार मिले चौसठ खिले, बीस खड़े कर जोड़।
सज्जन से सज्जन मिले, विहँसे सप्त करोड़ ॥

प्रणाम करने वाले दो सज्जनों के दो–दो आँखें चार हुए, दोनों के ३२+३२ दाँतें चौसठ हुए, दोनों के हाथों के दश–दश अंगुलियाँ बीस हुए अर्थात् इन सब अंग प्रत्याङ्गों का मधुर व भव्य मिलन से मन, प्राण शरीर पुलकित हो उठते हैं। सात करोड़ रोम के रोमांच से आत्मा कृत्य–कृत्य हो जाती है। हृदय सागर में आनन्द की लहरें उमड़ती हैं। निष्पाप भाव का उदय होता है। उस

दुर्लभ व नाजुक पल में मानों अमरलोक से भावरसामृत की वर्षा हो रहीं हो, प्रणाम की मधुर ध्वनि मंद–मंद रस धारा के रूप में उछलती–लहराती, मचलती प्रति ध्वनि में तरंगित हो रहीं हो, शंका कुशंका, भय, घृणा, पाप, कपट एवं क्रोध रूपी बादल हृदय आकाश में छट रहे हो, तथा अभिमान व अहंकार की विशाल चट्टान टूट–टूटकर चकनाचूर हो रही हो ऐसा प्रतीत होने लगता है। चित्त में आनन्द की लहरें मस्ती लेने लग जाती हैं। तत्क्षण वहाँ परम शांति का साम्राज्य स्थापित हो जाता है। यहीं प्रणाम का चामत्कारिक आकर्षण है।

१८–कहीं खुशियाँ कहीं गम प्रणाम हमारे संग

दुनियाँ कितनी रंग–रंगीली है; देखो संसार का रंग कहीं खुशियाँ तो कहीं गम। कहीं अत्याचार, बर्वरता– बेरहमता से पीटे जाने पर शरीर ऊपर पड़े कोड़े के मार से खून उगलता, जीवन से धैर्य तोड़ता मानव तथा उसकी नमी आँखें, कहीं धमाकों से टूटती–ढहती इमारतें–छिन्न–भिन्न होकर उढ़ते बिखरते मानव शरीर के चिथड़े होते अंग, कहीं रोटी के टुकड़ों के अभाव में भूख से तड़पते–मिटते मानव का फटा–फटा दिल का चित्कार तथा हृदय को दहलाने वाली आवाज़ पूरी मानवता को शर्मसार कर रही हैं। दूसरी तरफ सूचना क्रान्ति के इस आणविक युग तथा औद्योगिक जगत् में प्रति स्पर्धाओं के दौर से गुजरता मानव, कहीं आलीशान इमारतें बनाकर सभी प्रकार के आमोद–प्रमोद की चीजें एवं भौतिक सुविधा की पराकाष्ठा–सर्वानुकूल बातावरण तैयार कर मौसमी बहार में मौज मस्ति का स्वप्न सजाता मानव, कहीं तो गुलाबी चेहरें मौसमी बहार में मौजवीर बनकर गुलछरे उढ़ा रहे हैं, विलासिता की आग में अपना यौवन रूपी धन को होम रहे हैं, पैसे पानी की तरह बहा रहे ह, उन्हें पता भी नहीं कि जीवन का अंतीम पड़ाव कहाँ है ?

चाहे कैसी भी परिस्थतियाँ बनकर आए, मानव जीना नहीं छोड़ता है। वह आगे ही बढ़ता है क्योंकि चलना ही जीवन है। परिस्थितियाँ नए–नए रंग को लेकर आती हैं वह कभी हँसाती हैं,

कभी गुद्‌गुदाती हैं, कभी हमें छिपाती हैं कभी हमारी जिन्दग़ी को सजाती हैं तो कभी हमें रुलाती भी हैं, इसी का नाम है जीवन।

जिन्दग़ी को सवारने, खुशियाँ बटोरने, सब का प्रिय एवं पूर्ण मानव बनने के लिए प्रणाम हमें साथ देता है क्योंकि प्रणाम हमारा है आज और कल का सहारा है। वह मानव-मानव के दिल को जोड़ता है अहंकार को तोड़ता है, भाग्य चक्र को प्रगति के तरफ मोड़ता है। अतः प्रणाम है दिल का रंग, हम सभी हैं उसके संग॥

१९-प्रणाम से नम्रता एवं सकारात्मकता

वृक्ष अपने फूल के द्वारा सृष्टि की सौन्दर्यता को बिखेर देते हैं। जब फलों से वृक्ष लद जाते हैं उस समय वृक्ष की डालियाँ लचकने, झुकने व मुड़ने लग जाती हैं। इसी तरह सद्‌गुणों से युक्त व्यक्ति नम्र हो जाता है। नम्र का अर्थ है विनित। नमना अर्थात् झुकना। नम्रता का मतलब होता है नम्र होने का भाव। यदि व्यक्ति के दैनिक व्यवहार में नम्रता आ गई तो समझलेना चाहिए कि वह महान है। नम्रता मानव जीवन का आभूषण है। वाणी में मधुरता, व्यवहार में नम्रता, प्रामाणिकता, सहनशीलता आदि भावों एवं गुणों का प्रकट या विकास होना एक आदर्श व्यक्ति के जीवन का लक्षण है। महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं कि परमधाम के घास तथा वृक्ष भी धामधनी अक्षरातीत श्रीकृष्ण को प्रणाम करते हैं तो चेतन प्राणी क्यों नहीं कर सकता ?

"घास करत हैं सेजदा, करें सेजदा दरखत"।
तो क्यों न करे चेतन, यों फुरमान फुरमावत॥ (परि. चौ.३२/३९)

जब घास तथा वृक्ष भी परमधाम में, धामधनी को प्रणाम करते हैं तो वहाँ की भूमि में विचरण करने वाली चेतन आत्माएँ श्रीकृष्णजी को प्रणाम क्यों नहीं करती हैं ? अर्थात् कहने का तात्पर्य यह है कि परमधाम में तो कण-कण में प्रणाम समाया हुआ है, जब श्रीराजजी की दिव्य

लीला का विस्तार होता रहता है तो प्रणाम भी पल–पल होता रहता है। सम्पूर्ण परमधाम प्रणाम मय है अथवा प्रणाम से ओत–प्रोत है। प्रणाम करना आत्मा की वृत्ति है तथा यह उसका सहज स्वभाव है। साधक का हृदय जितना पवित्र होता जाएगा उतना ही वह भावुक व प्रेमी होता जाएगा। प्रणाम, यह सच्चा सुन्दरसाथ व प्रेमी हृदय के भाव की वर्षा है। प्रणाम किसी के देखावा के लिए अथवा देखा–देखी में नहीं किया जाता है। दूसरों को आनन्द मिले या न मिले यह तो प्रणाम स्वीकार करने वाले ही जाने, परन्तु कुछ न कुछ आनन्द तो प्रणाम करते ही उस प्रणाम करने वाले व्यक्ति–खुद को मिलता है। दूसरी बात साधक साधना करते–करते जब समभावमें आ जाता है ("समत्त्वं योगं उच्यते") तो वह कण–कण में सभी देहधारी प्राणियों में, अपने आराध्य श्रीकृष्ण को देखता है। अतः भावविह्वल होकर अत्यन्त नम्रता के साथ उसे प्रणाम करता है तो वह आनन्दित हो जाता है। लालदास स्वामी, छोटी तथा बड़ी पत्री में प्रणाम का उल्लेख करते हुए अपने वीतक साहेब में लिखते हैं–

इन्द्रावती की वासना, मैं लिखे प्रनाम कोटान कोट।
अवधारियो तिनको, लीजो धनी की ओट॥
सब जन सो महाराज जू, करयो प्रनाम प्रमान।
श्री राज पौढ़े पलंग पर, सबको कहे प्रणाम॥ (लालदास वी.)

नम्रता से अहंकार का नाश होता है, श्रीकृष्ण की कृपा उनपर वरसति है, तथा वह भावुक हो जाता है। भक्ति साधना में भाव एवं नम्रताको ज्यादा महत्त्व दिया गया है–
"ज्यों ज्यों गरीबी लीजे साथ में, त्यों त्यों धनी को पाइए मान"।

अहंकार साधना के लिए बाधक है। अहंकार का नाश हो जाने पर ही सद्भावना का विकास होता है। सद्भावना से समरसता का भाव पैदा हो जाता है। सद्भावना जीवन की सच्चाई है। इसी से ही जीवन में परिवर्तन लाया जा सकता है। नम्रता, माधुर्यता, प्रामाणिकता एवं नैतिकता आदि गुणों का मूल बीज है–प्रणाम। प्रणाम ही मानव जीवन की सर्वोच्च नई उच्चाई देने में सक्षम व

कारगर साधन है। यही दुनियाँ की तस्वीर को बदलकर, नया भाग्य निर्माण कर मानव को पूर्ण मानव बना सकता है। यह ऋतम्भरा प्रज्ञा की तरह निर्विकार शसक्त साधन है जो निज बुद्धि एवं जागृत बुद्धि का आधारस्तंभ है।

प्रत्येक प्राणी या जीव जो देह धारी है उन्हें भी इस संसार में जीने का मौलिक अधिकार है। उन सभी प्राणियों का अपना–अपना परिवार है। उनका भी एक अपना जीवन होता है। अतः उन्हें सताना भी अधर्म है। उन्हें किसी भी प्रकार से तंग नहीं करनी चाहिए। कल्याण कारी भाव प्रेरित जीवन ही वास्तविक जीवन है। सब सुखी हो सब निरामय बने यही भावना सर्व श्रेष्ठ भावना है –

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग् भवेत् ॥

महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं कि– "**दुःख न देउं फूल पांखड़ी**" शायद फूल की पाँखड़ी से लगने (मारने) पर भी दुःख हो सकता है, इतना भी दुःख किसी को नहीं देना चाहिए। जो भी जीवों पर दया रखता है, सभी को प्रणाम करता है, उसके दिल में नफ़रत की भावना (नकारात्मक भाव) नहीं होती है। वास्तव में देखा जाए तो प्रणाम करते ही नकारात्मक भाव की गति में ब्रेक लग जाती है। उसके स्थान में सकारात्मक भाव पैदा हो जाता है। तथा सकारात्मक गति चालू हो जाती है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने जीवन को सफल बनानेके लिए अपने आचरण में पहले ईमानदारी लाए तथा सद्गुणों का निरन्तर विकास करें। वातावरण स्वच्छ बनाए, चाहे वह मन की गन्दगी हो या तन की, घर की हो या गली की, उन सभी प्रकार की गन्दग़ी से मुक्त रहें। भोले मस्तिभरे चेहरों में भी छुपा होता है ज़हर, अतः इस बात को शास्त्रकार भी दृढ़ता से कह रहे हैं कि रूप की नहीं गुणों की पूजा होती है। जिन्दग़ी बहार का सफर है, हर दिल को इस राह से गुजरना ही पड़ेगा तो क्यों न हम भटके राही को दिशा निश्चित कराने के लिए दिशाबोध यन्त्र का उपयोग करें ? जीवन में सच सपनों का पंख लगा देने वाला दिशा बोध यन्त्र ही प्रणाम हैं। प्रणाम

से ही सकारात्मक भाव जागृत हो जाता है। इस यन्त्र के सहारे हम संघर्ष की राह पर गुजर कर भी अपनी मंज़िल को अवश्यमेव प्राप्त कर सकेंगे। पूर्ण ब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्ण को प्राप्त करना ही जीवन का अंतिम लक्ष्य है। वहीं हमारे जीव के जीवन है। आत्मा के स्वामी है। प्रणाम जीवन है, प्रणाम दर्शन है, प्रणाम व्यवहार है, प्रणाम रीत है, प्रणाम प्रेम है, प्रणाम तारतम्य है, प्रणाम आत्मा है, प्रणाम के अलावा जो कुछ बच जाता है वह है परमात्मा।

२०-प्रणाम रहस्यात्मक रक्षा सूत्र

हर नया पल हमारे लिए एक न एक चुनौति व जिम्मेदारी को लेकर आता है। विश्व की कोई भी चींज स्थायी नहीं है। यह सम्पूर्ण जगत् अक्षर भगवान् के स्वप्न की सृष्टि है अतः मृग्तृष्णा की तरह मायावी है। यहाँ झूठ का विस्तार है सत्य को दबाकर झूठ सब के दिल में बादशाह बनकर बैठा हुआ है। जिसका मूल ही असत्य है वह सत्य का कैसे परिचय देगा ?
महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं-
सुपनकी सृष्ट वैराट सुपन का, झूठे सांच ढपाया।
असत आपे सो क्यों सत को पेखे, इन पर पेड न पाया॥ (किरंतन.२/४)

संसार सरकता ही रहता है। आत्मा एवं परमात्मा में कोई परिवर्तन नहीं है परन्तु यहाँ तो पल-पल परिवर्तन है। इस विराट या भवसागर के अनन्त प्रवाह का कोई अता-पता नहीं,यह कहाँ से प्रारंभ हुआ है, तथा इसका अन्त कहाँ है ? इस ब्रह्माण्ड के मायावी रहस्य को समझना कोई आसान कार्य नहीं है। माया के हथियार भी मायावी हैं, यह कब किस रूप में प्राणी को अपने वस में कर लेती है, बिल्कुल पता ही नहीं होता। महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं :-
एहना आउध अम्रत रूप रस, छल बल वल अकल।
अगिन कुटिल ने कोमल, चंचल चतुर चपल॥ (रास. प्र. १. ९)

यहाँ ताल ठोककर कोई भी दावा नहीं कर सकता कि मैंने माया (संसार) को जित लिया। यहाँ हर चमकती चींज सोना नहीं होती। बाहर से खूब सूरत अन्दर से सूरत नहीं होती। महामति श्री प्राणनाथजी सचेत करते हैं कि इस मायावी बाज़ार में हमें फूँक-फूँक कर अपने पग को रखने होंगे। हर "बला" से बचने के लिए तथा निर्भय होकर रहने-विचरने के लिए रक्षा सूत्र को हृदय में धारण करना बहुत जरुरी है। वह रहस्यात्मक रक्षा सूत्र है "प्रणाम"।

२१-भारतीय सांस्कृतिक चेतना के प्रति पाश्चात्य दृष्टिकोण

"पाश्चात्य विद्वान भी भारतीय सांस्कृतिक चेतना एवं हिन्दू धर्म की महानता से प्रभावित होकर प्रशंसा व गुणगान करने में नहीं चूके हैं। "भारत ने विश्व को एक ऐसा धर्म दिया है, जो सबसे प्राचीन है और तर्क संगत भी। भारत के विषय में वर्णन करते हुए वोल्टेयर ने लिखा है कि विश्व के सभी देशों को भारत का आश्रय लेना पड़ता था। जब कि भारत को किसी भी देश का आश्रय नहीं लेना पड़ा। उसने एशिया के महान सम्राट फ्रोडरिक को आश्वस्त किया कि हमारा पवित्र ईसाई धर्म केवल ब्रह्म के प्राचीन धर्म पर आधारित है- [राम स्वरूप]

"धर्म के क्षेत्र में सब राष्ट्र दरिद्र हैं; लेकिन भारत इस क्षेत्र में अरबों पति है।" [मार्क ट्वेइन, अमेरिकन विद्वान]

" सनातन धर्म मानव जाति का आध्यात्मिक संविधान है, । सनातन धर्म ही शाश्वत धर्म है। अतः यही विश्वधर्म है-(संपत भूपालम्)

"जब–जब मैंने वेदों के किसी भाग का पठन किया है, तब–तब मुझे अलौकिक और दिव्य प्रकाश ने आलोकित किया है, । वेदों के महान उपदेशों में साम्प्रदायिकता की गंध भी नहीं है। यह सर्वयुगों के लिए, सर्व स्थानों के लिए और सर्व राष्ट्रों के लिए महान ज्ञान प्राप्ति का राज मार्ग है–[हेनरी डेविड़ थोरी]

"कन्फेशन्स से लेकर अंतिम रचना तक टॉलस्टॉय की ऐसी एक भी साहित्यक रचना नहीं है, जो हिन्दू विचार से प्रेरणा लेकर न लिखी गयी हो–[मार्कोवीच]

"बीजगणित, रेखागणित (ज्यामेट्री) और अवकाश विज्ञान में उनके उपयोग करने की खोज हिन्दुओं ने की है–[सर मोनियर वीलियम्स]

"भारत की आध्यात्मिकता समस्त विश्वमें सबसे अधिकबहुआयामी है, इस बात में संदेह नहीं–[जार्ज फ्युरेस्टीन]

"भारत वर्ष के धर्म में गीता बुद्धि की प्रखरता, आचार की उत्कृष्टता एवं धार्मिक उत्साह का एक अपूर्व मिश्रण उपस्थित करती है–[डॉ. मेकनिकल]

"गीता का उपदेश इतना अलौकिक दिव्य और ऐसा विलक्षण है कि जीवन पथ पर चलते–चलते अनेक निराश और श्रांत पथिकों को इसने शांति आशा व आश्वासन दिया है और उन्हें सदा के लिए चूर–चूर होकर मिट जाने से बचा लिया है। ठीक उसी प्रकार जैसे अर्जुन को बचाया–[के. ब्राउनिंग]

"जगद्गुरु श्री कृष्ण ने भगवद् गीता के रूप में विश्व को एक अनुपम देन दी है। ज्ञान, भक्ति, कर्म–ये शाश्वत आदर्श एक दूसरे को साथ लिए हुए चलते हैं। इसमें से प्रत्येक अन्य दोनों के लिए आवश्यक हैं–[रेवरेंड आर्थर]

"वास्तव में सब प्राणियों के हृदय में बसने वाले सर्वव्यापक ईश्वर का उपदेश देने की अद्भुत सूक्ष्मता के कारण ही मैं हिन्दू धर्म से अत्यन्त प्रभावित हुआ हूँ–[प्रोफेसर पोलई मुलर ओंटंगा]

"जब हम वेदान्त और उस पर आधारित सुन्दर सत्साहित्य को पढ़ते हैं तब यह माने बिना नहीं रह सकते कि पायथागोरस और प्लेटो ने अपने सूक्ष्म सिद्धान्त भारतीय ऋषियों के मूल स्त्रोत से प्रकट किये हैं–[सर विलियम्स जोन्स]

प्राचीन युग की सभी स्मरणीय वस्तुओं में भगवद्गीतासे श्रेष्ठ कोई भी वस्तु नहीं है। भगवद्गीतामें इतना उत्तम सर्व व्यापी ज्ञान है कि उसके लिखने वाले देवता को हुए अनेक वर्ष हो जाने पर भी उसके समान दूसरा एक भी ग्रंथ अभी तक नहीं लिखा गया। गीता के साथ तुलना करने पर जगत् का आधुनिक समस्त ज्ञान मुझे तुच्छ लगता है। विचार करने से इस ग्रंथ का महत्त्व मुझे इतना अधिक जान पड़ता है कि किसी समय तो ऐसा विचार हो जाता है कि यह तत्त्वज्ञान किसी और ही युग में लिखा गया होना चाहिए। मैं नित्य प्रातः काल अपने हृदय और बुद्धि को गीता रूपी पवित्र जल से अवगाहन करता हूँ।–[महात्मा थारो]

श्रीमद्भगवद्गीता भारत के विभिन्न मतों को मिलाने वाली रज्जु तथा राष्ट्रीय जीवन की अमूल्य सम्पत्ति है। भारत वर्षका राष्ट्रीय धर्म–ग्रंथ बनने के लिए जिन–जिन तत्त्वों की आवश्यकता है, वे सब श्री मद्भगवद्गीता में मिलते हैं। इसमें केवल उपर्युक्त बातें नहीं है, अपितु यह सबसे बढ़कर

भावी विश्वधर्मका धर्म–ग्रंथ है। भारत वर्ष के प्रकाशपूर्ण अतीत का यह महादान मनुष्य जाति के और भी उज्ज्वल भविष्य का निर्माता है। [श्री एफ.टी. ब्रुक्स]

संसार में जितने भी ग्रंथ हैं, उनमें भगवद्गीता– जैसे सूक्ष्म और उन्नत विचार कहीं नहीं मिलते। जिस समय मैंने इस को पढ़ा, उस समय मैं विधाता का सदा के लिए ऋणी बन गया कि उन्होंने मुझको इस ग्रन्थका परिचय प्राप्त करनेके लिए जीवित रखा। [श्री आगस्ट विल्हेल्म फ्रॉनश्लीगल]।

इतने उच्च कोटिके विद्वानों के पश्चात् जो मैं इस आश्चर्यजनक काव्य को अनूदित करने का साहस कर रहा हूँ वह केवल इन विद्वानों के परिश्रम से उठाए हुए लाभ की स्मृति रूप में है और इसका दूसरा कारण यह भी है कि भारत वर्ष के इस सर्वप्रिय काव्यमय दार्शनिक ग्रन्थकेबिना अंग्रेजी–साहित्त्य निश्चय ही अपूर्ण रहेगा। [सर एडविन आरनल्ड]।

उपर्युक्त विचारों या उद्‌गारों से हमें स्पष्ट संकेत मिलता है कि भारत की आध्यात्मिक संपदा एवं संस्कृति विश्वधर्म एवं संस्कृति की आत्मा है अथवा ज्ञान–विज्ञान का मूल स्त्रोत है। अब यहाँ प्रश्न उठता है कि हिन्दू धर्म के सनातन परंपरा की मूल चेतना क्या है, तथा इसका मूल स्त्रोत क्या है ? इस सन्दर्भ में प्रणाम की प्राथमिकता पर आगे विचार प्रस्तुत किया जाएगा
।

भारत जागृति मोर्चा, ४०२ रत्नदीप बिल्डिंग, नवरंगपुरा, अहमदावाद–०९४२६३४९४६२ सर्व धर्म समान ? पृ.४,५ ॥
श्री राधा माधव चिन्तन–हनुमान प्रसाद पोद्दार–पृ. ४४८.४४९ ॥

प्रणाम एवं प्रणामी सुन्दर साथ-२२

जो प्रणाम करता है अथवा प्रणाम करना जानता है वह प्रणामी है। अपरिपक्व मानसिकता रखने वाले तथाकथित् तथ्यातथ्य (सत्य-असत्य) न समझने वाले लोग प्रणाम से कतराते हैं। प्रणाम, सृष्टि की जैविक परम्परा की अतुलनीय सम्पदा है। प्रणाम-संस्कार से ही हिन्दू संस्कृति, चरित्र, जीवन पद्धति, जीवन मूल्य एवं मानव कल्याणकारी संस्थाओं का विकास हुआ है। हिन्दू धर्म न किसी का गुलामी स्वीकार करता है और न किसी को गुलाम बनाता है। यह तो विश्वमानवता के लिए समर्पित सत्य पर आधारित सदाबहार बग़ीचा की तरह है।

हिन्दू चेतना का मूल स्रोत-प्रणाम, अकल्पनीय व अखूट सम्भावनाओं को लेकर मानव दिल दिमाग़ एवं आत्मा में स्थित है। मानव सभ्यता एवं संस्कृति की पहली किरणें जम्बुद्वीप-भरत खंड-आर्यवर्त देश में उतरी। हमारी संस्कृति (हेमेटिक परंपरा) की मूल प्रेरणा विश्व व्यापी रही है, इसीलिए यह परमार्थ की जन्म भूमि है। प्रत्येक व्यक्ति को महिमामय जीवन पद्धति प्रदान करने वाली भारतीय संस्कृति की आत्मा प्रणाम है। इस संस्कृति ने हमें सन्मान करना, मर्यादा का पालन करना, जीवन में गुलाब के फूल की तरह खिलना, परिपक्व होना सौन्दर्य को बिखेरना, सुवासित होना तथा आत्मनिर्भर होकर जीव-जगत् के साथ सौहार्द पूर्ण वातावरण में जीते हुए भक्ति भाव में लीन होकर परमात्मा में अपने जीवन का उत्सर्ग कर देना सिखाया है। जैविक परम्परा की अंतीम कड़ी मानव जीवन ही परिपक्व चेतना है। प्रणाम मनुष्य की सांस्कृतिक चेतना का भावनात्मक सम्वाहक है। यही विश्व व्यापक प्रेम का प्रथम पुष्प है। प्रेम, ब्रह्म वासना की रागात्मक ऊर्ध्वगामी परा शक्ति है। प्रेम अधोगामी होने पर संकीर्ण वासना का रूप बन जाता है। प्रणाम प्रेम को ऊर्ध्वगामी बनाने की चुम्बकीय शक्ति है। अहिंसा, दया, परोपकार, सेवा भक्ति एवं धर्मादि सारे तथ्य आकर इसी में विराम लेते हैं।

अपनी उम्मीदों के सूरज को वे आँखें ही देख सकती है जो प्रणाम की डोर से सपनों की पोटली को बाँधती है। किल्विष रहित किलकारी–मुसकान भरी खूब सूरत जिन्दगी़ की कोमल डाली पर खिले हुए उम्मीद के सुकोमल–मनोवांछित फूल के पीछे 'प्रणाम' का निकट व अत्यन्त गहरा सम्बन्ध है। प्रणाम से ही सृष्टि एवं आत्मा की आभा को बिखेरने वाला प्रणामी अर्थात् पूर्णमानव का आविष्कार हुआ है। सृष्टि में सर्वप्रथम प्रणाम एवं प्रणामी के गूढार्थ को प्रकट करने वाले अनन्त विभूषित श्री निजानन्द स्वामी सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी महाराज हुए जिन्होंने प्रणाम शब्दको सीमित परिभाषा से मुक्त कर उसका व्यापक आधार सामने रखते हुए भारतीय संस्कृतिको गौरवान्वित किया।

२३–प्रणाम मन एवं आत्मवेगी भाव तरंग

प्रणाम मन–चित्त–बुद्धि–प्राण–हृदय एवं आत्मवेगी भाव तरंगों का संगम है। आकाश गंगा–मंदाकिनी–Galaxy.(जिसमें लाखों करोडों तारे हैं१) की तरह यह प्रणाम भी भाव एवं आत्म गंगा की मंदाकिनी है। जिसमें सद्भाव के संख्यातीत अनन्त–अनन्त परमाणुएँ समाए हुए हैं। जिस प्रकार यूरेनियम धातु–(uranium) के छोटे–छोटे परमाणु एक बिन्दु (.) में कई अरबों की संख्या में समा सकते हैं इसी प्रकार प्रणाम के ब्रह्माण्ड व्यापी सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमाणु चेतन प्राणी के हृदय में समाए हुए हैं; परन्तु वे सभी परमाणु सुप्तावस्था में हैं। सहृदयता पूर्वक प्रेम भाव से एक दूसरे को प्रणाम करनेपर धीरे–धीरे सभी सुप्त परमाणु जागृत होने लग जाते हैं। प्रणाम करना, सद्भाव एवं निस्स्वार्थ प्रेम का विस्तार करना न केवल मानव का मौलिक अधिकार है अपितु प्राणीमात्र का कर्तव्य एवं नैसर्गिक गुण भी है।

विश्व की सांस्कृतिक परम्परा में भारतीय संस्कृति की अहम भूमिका रही है। अहिंसा, दया, प्रेम, सहिष्णुता, प्रणाम, सेवा एवं धर्म नीति आदि के कारण भारतीय संस्कृति महिमावान हुई है।

वैश्विक सन्दर्भ में प्रणाम भारतीय संस्कृति की अस्मिता की पहिचान कराने में अपनी अहमियत रखता है। भारतीय संस्कृति की अविच्छिन्न (अटुट) परम्परा में न केवल देवी–देवता, ईश्वर, चेतन प्राणी व परमात्मा अपितु धरती–पर्वत–वन, उपवन, नदी, वृक्ष तारे, चन्द्र, सूर्य आदि सजीव–निर्जीव सभी को प्रणाम करके हृदय की सद्भावना को विकसित करने की मान्यता रही है। यहाँ की भौगोलिक आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक उत्कृष्टता के कारण भारतभूमि अनादि काल से पूजित तथा विश्वगुरु के रूप में सन्मानित रहीं है। देवी–देवता, पीर, पैगम्बर, तीर्थंकर एवं अवतारी महापुरुषों ने यहाँ जन्म लेकर इस देश एवं संस्कृति का गौरव बढ़ाने तथा इस की पावनता को विश्वव्यापी बनाने में अपनी महती भूमिका निभाई है।

संसार का सबसे ऊँचा एवरेस्ट शिखर की ऊँचाई ८ हज़ार ८४८ मीटर (२९,०२८ फीट लगभग साढ़े ५ मील) है२। इस पर्वतराज हिमालय को प्रणाम करने पर मात्र एक सेकेण्ड में २९,०२८ फीट तक हमारी सद्भावना की तरंगे उठती हैं। इसी प्रकार ऊर्जा शक्ति प्राप्त करने के लिए एक बार सूर्यदेव को प्रणाम करने पर मात्र एक सेकेण्ड में ९ करोड़ ३० लाख मील ऊँचाई तक हमारी सद्भावना की तरंगे उठती हैं। क्योंकि पृथ्वी से सूर्य तक की दूरी ९ करोड़ ३० लाख मील है, एक बार धरती माँ को प्रणाम करने पर मात्र एक सेकेण्ड में ५० करोड़३ योजन विस्तार तक हमारी सद्भावना की तरंगे पहुँचती हैं। अष्टावरण (विराट की प्रथम समष्टि) को प्रणाम करने पर मात्र एक सेकेण्ड़ में ५५५५५५५०००००००, पाँच पद्म, ५५नील, ५५ खरब, ५५ अरब तथा ५० करोड़४ योजन विस्तार तक हमारी सद्भावना की तरंगे पहुँचती हैं। जब पाँच तत्त्व २५ प्रकृति ४ अन्तःकरण को सम्मोहित करती हुई प्रणाम की धारा अष्टावरण को पार करती हैं तो अहंकार का आवरण नष्ट हो जाता है। क्रमशः महतत्त्व (आदिनारायण के सूक्ष्म स्वरूप) सात शून्य, आदि–नारायण के महाकारण स्वरूप, महाशून्य समष्टि, अक्षर भगवान् के चार अन्तःकरण (अव्याकृत, सबलिक, केवल, सतस्वरूप) अक्षर भगवान् के मूल स्वरूप के हृदय को स्पर्श करती हुई अनन्त ब्रह्माण्ड व्यापी होकर प्रणाम की सद्भावनामय तरंगे अक्षरातीत श्री कृष्ण–धामधनी पूर्णब्रह्म

परमात्मा के हृदयमें समा जाती है, पुनः वहाँ से लौटकर तथा पूर्णब्रह्म परमात्मा के आशीर्वाद रूप कृपा–(मेहेर) की तरंगे बनकर अनन्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त होती हुई विश्व के सम्पूर्ण प्राणियों के दिल दिमाग़ एवं आत्मा को ऊर्जा प्रदान करती हुई साधक के पवित्र हृदय में पुनः समा जाती है। आकाशगंगा स्थित सबसे उपर रहने वाले तारेकी दूरी २९,३२,८४,८०,०००००००००० (२९ शंख ३२ पद्म ८४ नील ८० खरब़) माईल है, तथा उसका प्रकाश धरतीतक पहुँचनेके लिए १० लाख वर्ष लगते हैं। मनमें उस तारेको यादकर प्रणाम करते ही हमारी सद्भावनामयी तरंगे तारे तक पलभर में पहुँच जाती हैं। यही तो प्रणामका चमत्कार है। यदि कोई तारेकी दूरी को पता करना चाहे तो निम्न गणना क्रमको ध्यान से देखें।

11160000 Minut
669600000 Hour
8035200000 Day
2932848000000 Year

293284800000000000 Year 1 Lac. प्रकाश की गति १ लाख ८६,००० मील प्रति सेकेण्ड है३ परन्तु प्रणाम की सद्भावमय तरंगों की गति में इतनी तीव्रता है कि किसी भी प्रकार अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। आत्मा एवं परमात्माके साक्षात्कार करनेके लिए कारगर साधन प्रणाम है क्योंकि बिना प्रणाम मंत्र शक्ति भी सक्रिय नहीं होती है। मंत्रके जापके बिना बुद्धि निर्मल नहीं होती है। निर्मल बुद्धिके साथ जब भाव नहीं जुड़ता तबतक संवेदना प्रकट नहीं होती है। अतः संवेदना को प्रकट करने वाला अचुक साधन प्रणाम है।

---

१. सचित्र विश्वकोश. डॉ. बालकृष्ण–पृ.६८ ॥

२. सचित्र विश्वकोश– सम्पा. डॉ. बालकृष्ण–प्रकाश–राजपल एण्ड सन्ज कश्मीरी गेट दिल्ली.पृ.१०.४३.६०।

३. श्री सृष्टि विज्ञान वर्णन–पृ.२४.२५. रणछोड़दास वीरजी.

४. तारतम सागर प्रकाश प्र. १२/१ ॥

२४-ब्रह्म एवं पूर्णब्रह्म

वेद, उपनिषद्, गीता, भागवत एवं पुराणों के प्रमाण के आधार पर अक्षर को ब्रह्म कहा गया है तथा अक्षरातीत श्री कृष्ण को पूर्ण ब्रह्म। श्री कृष्ण प्रणामी धर्म (निजानन्द सम्प्रदाय) में इस धर्मके प्रणेता "निजानन्द स्वामी" सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी को बुद्धावतार एवं विश्वधर्म समन्वय प्रणेता महामति श्री प्राणनाथजी को बुद्ध निष्कलंक अवतार कहा गया है। ये दोनों पूर्णब्रह्मकल्प अनन्त विभूषित सच्चिदानन्द स्वरूप हैं जो ब्रह्मसृष्टि, ईश्वरी सृष्टि एवं जीव सृष्टि के आत्म कल्याण के लिए ब्रह्मधाम से इस धरती पर अवतरित हुए हैं-

एते दिन त्रैलोक में, हुती बुध सुपन ।
सो बुधजी बुध जागृत ले, प्रगटे पुरी नौतन ॥
अब सो साहेब आइया, सब सृष्टि करी निरमल ।
मोह अहङ्कार उड़ाए के सखी देसी सुख नेहेचल ॥
अखण्ड सुख सबन को, होसी चौदे तबक ।
सो बरकत ब्रह्मसृष्टि के, पावें दीदार सब हक ॥ (तारतम सा. परि. प्र.२/११,१२,१७)

छत्रसालजी महाराज ने निष्कलंक बुद्धावतार महामति श्री प्राणनाथजी को परम पुनित मोक्ष भूमि श्री ५ पद्मावतीपुरी धाम अन्तर्गत चोपड़ा मंदिर में देदीप्यमान सिंहासन पर विराजमान कर स्वमुख से गाई गई पंक्तियाँ आज श्री कृष्ण प्रणामी धर्म की आध्यात्मिक धरोहर रूप बनी हुई है, जिन्हें आरती के समय बोली जाती है-

पूर्ण ब्रह्म ब्रह्मसे न्यारे, आनन्द अखंड अपारे ।
शिव सनकादि आदि के इच्छित, शेष न पावत पारे ॥१॥
अगम जानिके निगम कहाये, खोजि खोजि पचि हारे ।
जानिके मूल धनी अँगना अपनी, सो घर आये हमारे ॥२॥

श्री ठकुराणीजी सखियन सुधाँ, लेकर संग पधारे ।
त्रिगुण फाँसके फंद परे ते, सो फंदा निरवारे ॥३ ॥
वारी-वारी जाऊँ मैं अपने पिया पर, शोभा मुखहुँन आवे ।
सिंहासन आसन बैठारे, छत्रसाल गुण गावे ॥ ४ ॥

श्री प्राणनाथजी को साक्षात् पूर्णब्रह्म स्वरूप मानकर छत्रसाल महाराजने भावविभोर होकर उनकी आरती उतारी थी। उपर्युक्त पंक्ति में पूर्णब्रह्म को अक्षरब्रह्म से परे बताया गया है। ब्रह्म क्या है ? दुनियाँ ब्रह्म को क्यों चाहती हैं ? आज के युग में युवा वर्ग के दिल में इस प्रकार का प्रश्न उठना स्वभाविक ही है क्योंकि युवा वर्ग युवा को ही अधिक चाहता है। वेद उपनिषद् आदि शास्त्रों एवं धर्मग्रन्थों में ब्रह्म को सदा युवा बताया गया है-

चिदादित्यं किशोराङ्गं परे धाम्नि विराजितम् ।
स्वरूपं सच्चिदानन्दं, निर्विकारं सनातनम् ॥

ब्रह्म का मतलब-'बृंहयतीति ब्रह्म' अर्थात् जो सदा सर्वदा सबको बृंहण-वृद्धि, उल्लास, खुशी, आनन्द को देनेवाला सर्व समर्थ सच्चिदानन्द स्वरूप अनन्त ब्रह्माण्ड का मूल तत्त्व है, जो निरन्तर उत्थान की ओर ले जाने वाला है, जो सब के हितों का पोषण करता है एवं सब का आश्रय स्वरूप है, उसे 'पूर्ण ब्रह्म' कहते हैं। जिसके आश्रय में नित्य नवीन सुखों का सृजन होता है, जो निरन्तर ब्रह्मानन्द में सर्वातीत स्वरूप से विराजमान है, जिसकी लीला मात्र से सबकी सत्ता विद्यमान है, जो सबको अपेछित होते हुए स्वयं निरपेक्ष है, वही परमब्रह्म पर वाच्य है।

पाताल से लेकर अक्षर ब्रह्मतक ब्रह्म के नाम से जिन-जिन महान विभूतियों का वर्णन वेद, उपनिषद्, गीता भागवतादि शास्त्रों में किया गया है वे सब के सब विभूति ब्रह्म, त्रिपादविभूति ब्रह्म एवं कार्यब्रह्म कहलाते हैं परन्तु पूर्णब्रह्म नहीं हैं। पूर्णब्रह्म तो एक ही हैं-अक्षरातीत श्री कृष्ण-

'एकमेव अद्वितीयम् ब्रह्म'। छान्दोग्य उपनिषद् में मन को ब्रह्म कहकर उपासना करने का संकेत दिया गया है। (छा. उ. ३-१८)

श्रुतियों में ॐखंब्रह्म, तैतीरीय उपनिषद् में अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात, वृहदारण्य उपनिषद् में हृदयं वै सम्राट, छान्दोग्य उपनिषद् में सर्व खल्विदं ब्रह्म, आदित्यो-ब्रह्म , एवं श्रुति में कहीं कहीं पर ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म कहकर ब्रह्मका स्पष्टीकरण करने का महद् प्रयास किया गया है वे सब के सब कार्य ब्रह्म हैं। शास्त्रों की यह शैली है कि जिस किसीको उत्कर्षपूर्ण देखा ब्रह्म कह दिया। जिस किसीको ऐश्वर्य विशिष्ट देखा उसे भगवान् कह दिया। 'अन्नं ब्रह्म' मनोब्रह्म, ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म, 'सर्व खल्विदं ब्रह्म' इत्यादि श्रुतियों में अन्न, मन तथा ॐकार को एवं सम्पूर्ण विश्व को ही जो ब्रह्मत्वेन उपस्थान किया है वह केवल उत्कर्ष बताने के लिए है। वास्तविक ब्रह्मको 'अन्न' 'मन' या 'ॐकार' शब्द से उपस्थित नहीं किया गया है। क्योंकि वह तो 'अक्षरात्परतःपरः अविनाशी अक्षर ब्रह्म से भी पर है। ॐकार का सम्बन्ध प्रणव से हैं। श्रुति में प्रणव को धनुष की उपमा देकर स्पष्ट कर दिया है कि प्रणव, ब्रह्म नहीं, ब्रह्मतक पहुँचने का पात्र नहीं, किन्तु जीवात्मा परमात्मासे भिन्न एक तीसरा पदार्थ है। धनुष कभी भी लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकता, लक्ष्य का निशाना तो वाणसे ही होता है अतः प्रणव ॐकार धनुष है, जीवात्मा वाण है, तथा परमात्मा उसका लक्ष्य है-

प्रणवो धनुःशरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत्॥ (मुंडक-२-२-४)

इस मानव पिंडका साथ ब्रह्माण्डका एक ही रूप वर्णन किया गया है दोनोंकी चार-चार अवस्थाएँ भी वर्णन की हैं- यह सब प्रणवका ही व्यष्टि समष्टि स्वरूप है। विराटका अभिमानी देव ब्रह्मा है, जो नाभि प्रदेशमें स्थित है। स्वप्नावस्था का देवता विष्णु है, जो हृदय में विराजमान है। सुषुप्ति का अभिमानी देव रुद्र भगवान् है, तुरीय अवस्था का देवता परम-अक्षर-परा मात्रा है, जो अर्थमात्रा भी कही जाती है तथा मूर्धन्य स्थान में स्थित है१.-

एकमात्रो द्विमात्रश्च त्रिमात्रश्चैवं भेदतः।

अर्द्धमात्रा परा ज्ञेया तत ऊर्ध्वं परात्परम् ॥ (ब्रह्मविद्योपनिषद्)

इसी अर्धमात्रा को परम अक्षर वर्णन किया है। ये चारों मात्रा इस विश्व रूप नारायण के स्वरूप में स्थित हैं। इस चारों मात्राओं का समष्टि रूप आदि नारायण से पर महाशून्य 'बिंदु' रूप स्थित है। इस बिन्दुरूप प्रणव से पर परमतत्त्व है। जिस प्रकार कांशा धातु का घंटा शब्द को ध्वनित करता है और फिर अपने में ही लीन कर लेता है, उसी प्रकार अव्याकृत से प्रणव ॐकार का उदय होता है और जब सबको समेट कर उसी अपने मूल स्वरूप में लय हो जाता है, उससे पर जो तत्त्व है उसे ब्रह्म कहते हैं–

कांश्यघण्टा निनादस्तु यथा लीयति शान्तये ।
ओंङ्कारस्तु तथा योज्यः शान्तये सर्वमिच्छता ।
यस्मिन्विलीयते शब्दस्तत्परं ब्रह्म गीयते ॥ (ब्रह्मविद्योपनि.)

क्षर संज्ञक ब्रह्म आदिनारायण अर्थात् महाविष्णु है। प्राकृति प्रलयके समय जो कुछ व्यक्त है वह अव्यक्त हो जाता है। शेषनारायण, शम्भु अपने–अपने गुणोंको समेटकर महाविष्णुमें मिल जाते हैं। महाविष्णु भी छोटे विष्णुओंके सहित प्रकृतिमें मिल जाते हैं। प्रकृति परमात्मामें जा मिलती है–

प्राकृते प्रलये प्राप्ते व्यक्तेऽव्यक्तं गते पुरा ।
नारायणश्च शम्भुश्च संहृत्य स्वगुणान् बहून ॥
महाविष्णौ विलीनश्च ते सर्वे क्षुद्रविष्णवः ।
महाविष्णुः प्रकृत्यां च सा चैवं परमात्मनि ॥ (ब्रह्मवैवर्त प्रकृति खंड़)

---

१. विराट पट दर्शन पृ–३०४ ले. कृष्णदत्त शास्त्रीजी।

२५–प्रणाम शब्द ब्रह्म

प्रणाम साधारणतः एक शब्द है। पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्ण तो वास्तव में शब्दतीत हैं। उस अचिन्त्य, अतुलित बलसम्पन्न, अगम्य परात्पर पूर्णब्रह्म परमात्माको केवल शब्द से नहीं पकड़ा जा सकता, परन्तु शब्दके साथ यदि भाव प्रेम, आस्था दृढ़ विश्वास एवं श्रद्धा जुड़ जाए तो भक्ति साधनाके द्वारा उन्हें प्राप्त किया जा सकता है अन्यथा नहीं। **'भावे ही विद्यते देवो तस्मात् भावो हि कारणम्'।**

सृष्टिके मूलमें परमात्माका हुकम ही शब्दके माध्यम से सर्जन विसर्जनका कार्य करता है। सृष्टिका रहस्योत्घाटन एवं परमात्माका परिचय शब्दके द्वारा ही होता है। महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं–

"हुकुमे वेद कतेव में लाखों लिखें निशान"।
सत चाहो सो सबदा चिन्हों, ओ आप न देवे दिखाई।
जिन पाया तिन माहें समाया, राखत जोर छिपाई॥ (किरंतन प्र.५/८)

शब्द में आकाश तत्त्व वि द्यमान है। आकाश व्यापक एवं विशालता का प्रतीक है। ब्रह्म भी अनन्त आकाशवत् विशाल है। वाणी तन्त्र से या वाग्यन्त्र से उत्पन्न मधुर शब्द ही प्रणाम है जो जीवन में माधुर्यता का भाव भर देता है। ध्वन्यात्मक दृष्टि से देखा जाए तो उसे शब्द ब्रह्म भी कहा जा सकता है॥ शब्द के अन्दर शक्ति का निवास है। शक्ति से ही प्रकृति व समस्त जग जीवन का सर्जन–विसर्जन तथा नियन्त्रण होता है। जिस प्रकार ब्रह्म सनातन है इसी तरह शब्द व्यवहार भी सनातन है। इसी लिए शब्द को भी ब्रह्म कहा गया है। पूर्ण ब्रह्म परमात्मा सत्ता रूप से सभी जगह कण–कण में ओत प्रोत हैं वही आदि मध्य तथा अन्त सभी का नियमक परम सत्य हैं। उसकी पहिचान शब्द के द्वारा ही सम्भव है–

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च॥ (गीता अ.१०/२०)

२६-प्रणाम जीवन का नैतिक अधिकार

जीवन में शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास के साथ नैतिक चरित्र के निर्माण तथा उत्थान के लिए विनम्रता पूर्वक सबको प्रणाम करना-अभिवादन करना न केवल मानव मात्र का मौलिक व जन्म सिद्ध अधिकार है अपितु नैतिक जिम्मेदारी भी है, क्योंकि मानव मात्र नैतिक प्राणी है१ । वह अपनी अपनी अकर्मण्यताके कारण इस महान परम्परा से वंचित रह जाता है। अतः मनुष्य को ऐसे पवित्र कार्य में एक पलका भी विलम्ब नहीं करना चाहिए। नियमित रूपमें सबको निष्काम भाव से प्रणाम करना चाहिए। इससे मानव समाज़ में घृणा व द्वैष की भावना समाप्त हो जाएगी तथा एक दूसरे पर विश्वास एवं प्रेममय वातावरण का सृजन होगा तथा मनुष्य जीवन सफल हो जाएगा। प्रणाम या प्रणिपात करना त्रिकालावाधित् सत्य सनातन श्री कृष्ण प्रणामी धर्म की मूल परम्परा है। प्रणाम से ही भारतीय सभ्यता का जीवन दर्शन अपनी आँखें खोलता है। चाहे वह दामपत्य, सामाजिक, पारिवारिक, आध्यात्मिक जीवन हो या विश्व व्यापी संगठन। सम्पूर्ण जगत् में अमन चैन, अपनत्त्व व एक दिली की सर्वोच्च भावना का वैज्ञानिक धरातल एक मात्र प्रणाम ही है। प्रणाम ही जीव जगत् से लेकर सूक्ष्म अणु-परमाणु तथा आत्म-परमात्मा तक अपनी शुभ्र स्निग्ध शीलता से अभिभूत कर देता है। प्रणाम को हम अपने तार्किक दृष्टिकोण से भी देखें तो भी हमें लाभ अवश्य मिलेगा, कारण कि प्रणाम एक औषधि का रूप भी है। बिना पैसे लाखों का इलाज प्रणाम से हो सकता है जिन्दगी में जितने तनाव हैं, टेन्सन संबंधित जितनी बिमारिंयाँ हैं। समस्याओं के जितने बोझ हैं उन सभी के समाधान के लिए एक ही तरीका है कि हम प्रसन्न मुद्रा में सब को प्रणाम करें। प्रणाम प्राणों का अभिवादन है। यह किसी एक पंथ, समाज, सम्प्रदाय एवं संगठन विशेष की बपौती नहीं है। यह तो एक दूसरे को खुश करने, स्वयं खुश रहने की एक जीवन उपयोगी प्रक्रिया व शिष्टाचार है। चिन्तामुक्त जीवन जी ने की सुस्वास्थ्य दीघार्यु जीवन की विकसित व नैतिक प्रणाली है जो भूत-भविष्य, वर्तमान तीनों काल में उपयोगी प्राचीन होते हुए भी

अर्वाचीन युग प्रासंगिक भी है यह शब्द केवल युग सापेक्ष ही नहीं है, यह तो सनातन ब्रह्म से सम्बन्ध रखने वाला अनादिकालीन सनातन धर्म परम्पराका रूढ़ शब्द है।

1.ENCYCLOPEDIA OF POLITICAL THOUGHT- OM PRAKASH GAWA-185 P.

२७-ज्ञान-विज्ञान का मानक रूप प्रणाम

आध्यात्मिक ज्ञान एवं विज्ञान ये दोनों मानव जीवन की गति के पंख हैं। भौतिक ज्ञान-विज्ञान एवं आध्यात्मिक ज्ञान के संगम से प्राप्त ऊर्जा शक्ति के द्वारा मानव मूल्य एवं उसकी सुरक्षा के लिए मानक तैयार करना ही आज की प्राथमिकता एवं प्रासंगिकता है। यह मानक का रूप केवल बौद्धिक ज्ञान की सम्पन्नता एवं विपुलता मात्र नहीं है। पूर्ण सत्य तक पहुँचने उसका प्रत्यक्ष अनुभव करने तथा सार्वभौमिक ईश्वरीय सत्ता का सम्मान करने का अपरिहार्य साधन प्रणाम ही मानकका रूप है। लेकिन मानव जीवन एवं सभ्यता का अंतिम मानदण्ड (ULTIMATE STANDARD) तो परम सत्य-परमात्मा ही है।

प्रणाम केवल सामान्य शिष्टाचार मात्र नहीं है। इस के अन्दर गुणात्मकता (Quantity) एवं गुणवत्ता (Quality) दोनों गुण मौजूद हैं। इस को किन्हीं काल्पनिक (Visiorary) और मनमानी (Arbitrary) संकल्पनाओं के सन्दर्भ में उत्कृष्ट या निकृष्ट नहीं मानना चाहिए, क्योंकि इसके अन्दर गरिमा की भावना (Sense of Personal Dignity) एवं आत्म-सम्मान की भावना (Sense of Honor) दोनों भाव विद्यमान हैं। फिर भी यदि वरेण्य शोधकर्ता अपनी असामान्य बुद्धि शक्ति 'तर्कशक्ति' भाव एवं स्वविवेक से प्रणाम शब्द का नया अर्थ विस्तार कर उसमें जीवन मूल्य मोती रूपी अर्थ को निकाल सकते हैं, तो उनका सुझाव वान्छनीय हैं। आज के परिपेक्ष्य में नैतिक स्तर पर प्रणाम की वैज्ञानिक कार्य विधि (साइंटिफिक मैथडलाजी) भी होनी जरूरी है।

मानव जीवन की आस्था एवं विश्वास से हटकर जब व्यक्ति दुराग्रह ग्रसित मानसिकता में आ जाता है तो अपने जीवन के इस प्रणाम रूपी अमूल्य उपहार को वह खो देता है अर्थात् वह प्रणाम स्वीकार नहीं करता। दैनिक क्रिया के रूप में प्रयोग किए जाने वाला "प्रणाम" शब्द उसके व्यवहार में लुप्त हो जाता है। बर्ताव व शिष्टाचार में बदलाव आ जाने से उसके प्रति लोगों के विश्वस की भावना खत्म हो जाती है। व्यक्ति तनावग्रस्त हो जाता है। अतः थोड़े ही दिनों में उसके जीवनका दीया फड़फड़ाके बुझ जाता है। प्रत्येक व्यक्तिके जीवनकी आस्थाकी भी अपनी–अपनी सीमाएँ होती हैं। परमात्मा असीम है। उस असीम सत्ताधीश को रिझानेका प्रथम व कारगर साधन है प्रणाम। प्रणाम ही एक दूसरे को ससन्मान पुलक–प्रकम्पित स्नेह दे सकता है। उसके प्रयोग हो जाने पर दबाव तथा तनाव (Stress) का युग ही समाप्त हो जाता है। प्रणाम बगीचाका वह परिपक्व पुष्प है जो हर पल सुगन्ध ही सुगन्ध बिखेरता है तथा महकना उसका स्वभाव है। महकता ही रहता है।

प्रणाम का मानव जीवन के साथ अटूट बन्धन है। वह जीवन में ऐतिहासिक महत्त्व को भी बनाये रखता है। देव दुर्लभ मानव तनकी सार्थकता प्रणामको नित्य व्यवहारमें अपनाने पर ही सम्भव है। न केवल मंदिर, मसजिद, चर्च गुरुद्वारा, देवालय, स्कूल कालेज, ट्रेनिंग सेन्टर, केम्प होटल, होस्टलों बाजार–मंडी हो या घर, यात्रा स्थल हो या सिनेमा हॉल धरती, स्वर्गादि लोक, बैकुण्ठादि पुरी, पाताल से लेकर परमधाम तक सभी जगह प्रणामकी आवश्यकता होती है। नास्तिक हो या आस्तिक धर्मवादी हो या कर्म वादी, फिल्मी हो या इलमी, कलाकार हो या सलाकार, डाक्टर हो या एक्टर, देवी–देवता हो या भूत–प्रेत, दानव हो या मानव, जलचर हो या थलचर, नभचर हो या गुप्त चर, दुराचारी हो या आततायी, सेना हो या व्यापारी, भष्टाचारी हो या कर्मचारी, सकारात्मक भाव से सब को प्रणाम करना चाहिए। शायद सभी प्रकार के प्राणी सुधरेंगे या नहीं वे सभी अपने–अपने कर्म के अधीन हैं। परन्तु प्रणाम करने वाला सुधर जाएगा तथा उसकी दिनचर्यामें भी काफी सुधार होगा, वह अपने मस्तिष्क को विकृत नहीं करेगा। उसके दिल में आत्मवत् सर्व भूतेषु की भावना जागृत होगी और वह सम्मानित होगा। महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं अपने अवगुण को

त्याग दो एवं दूसरे व्याक्ति में कोई अच्छा गुण हो तो उसको ग्रहण करो "**अवगुण काढ़े गुण ग्रहे**" ।

प्रणाम को केवल अक्षर शब्द का माया जाल मात्र नहीं समझना चाहिए। यह तो हमारे भाव एवं अन्तर्मनकी संवेदनाओंका पवित्र दान है। यह हदयकी बगियामें खिला हुआ परिपक्व फूलकी तरह है। वहीं फूल एक दिलमें खिलता है, दूसरे दिलमें महकता है एवं सुगन्ध बिखेरता है। प्रणाम करने वाले व्यक्ति का दिल संवेदनशील होता है। वह हमेशा निर्भय रहता है। उसकी जिन्दगी़ के हर पल में उसे रोशनी ही रोशनी मिलती है। वह तो सबके दिलका 'प्यारा राजदुलारा आँखोंका तारा व जीवनका सहारा' होता है।

"यह फूल खिलकर मुरझाएगा, यह दीप जलकर बुझ जाएगा।
तू मर्म जीवन का समझले, नहीं तो यूं ही यह बिखर जाएगा॥

"अतुल्य सम्पत्ति को प्राप्त करने के लिए चाहे जीवन में जोखिम उठानी पड़े, चाहे दहकते भभकते अंगारों पर चलना भी क्यों न पड़े, साहसी व्यक्ति हिचकता नहीं, वहीं भाग्य चक्र को मोड़कर अपने सपनों को सच में बदल सकेगा"। हिम्मत कभी भी हारनी नहीं चाहिए अगर हम अच्छे कार्यका प्रारम्भ शुभ संकल्प से करते हैं तो ईश्वर हमें साथ देता है। अगर हमें जीवनमें सफलता प्राप्त करनी है तो हमेशा अपने सोच को ऊँचा रखें। जिसका जितना बड़ा स्वप्न होगा वह उतना ही बड़ा कार्य कर पायगा।

२८-प्रणाम मानव मन की पूर्ण परिकल्पना

'प्रणाम' अति प्राचीन शब्द है। यह अतीत के गौरव को आधुनिक शीशे में ढालकर नित्य नया रूप दिखाई देने वाला तथा मूल भाव में स्थित ध्रुव सत्य को नहीं छोड़ने वाला अति मूल्यवान शब्द है, इसीलिए कहा जाता है 'ओल्ड़ इज गोल्ड़'। वास्तव में देखा जाए तो प्रणाम को मानव मन

की पूर्ण परिकल्पना (हाइपोथित) के रूप में भी देखा जा सकता है जो जीवन के असंख्य विसंगतियों को दूर कर अनेकता में एकता की भावना को भर सकता है।

प्रणाम ऊर्जा समवर्धक शक्ति है जो विश्व व्यापी समष्टीगत चेतना को जागृत करने में सामर्थ्य रखता है। वास्तव में देखा जाए तो सृष्टि एवं संस्कृति का शुभारंभ प्रणाम से ही हुआ है। हम जब–जब कोई कार्य ढंग से करना चाहते हैं तो प्रणाम का प्रयोग करना ही पड़ता है। चाहे व मानसिक रूप में हो या फिर व्यवहारिक। प्रणाम आत्मा की आवाज़,–हृदय की भावधारा तथा मन की पूर्ण परिकल्पना है, जिसका आदि है पर अन्त नहीं। सृष्टि के काल धर्म एवं किसी भी संस्कृति ने अपना गर्भ धारण भी नहीं किया था उस समय भारतीय संस्कृति में प्रणाम करने की प्रथा चालू थी। श्री कृष्ण प्रणामी धर्म सनातन धर्म के रूप में भारतीय संस्कृति की आत्मा में सुदृढ़ हो चुका था, परन्तु यह सम्भवतः सब को पता नहीं था। जब सद्गुरु निजानन्द स्वामी श्री देवचन्द्रजी महाराज का इस धरती पर आगमन हुआ तब उन्होंने इस रहस्य का स्पष्टी करण करते हुए श्री कृष्ण प्रणामी धर्म को पुनः प्रतिष्ठित किया। श्री कृष्ण प्रणामी धर्म भारतीय संस्कृति की मूल धार्मिक अवधारणाओं का कायाकल्प है। सद्गुरु श्री निजानन्द स्वामी श्री देवचन्द्रजी महाराज के परम शिष्य महामति श्री प्राणनाथजी महाराज ने सृष्टि में अनवरत रूप से चल रही दिक्भ्रमित आत्मघाती परंपरा एवं संकुचित अवधारणाओं के काल चक्र से मानव जाति को मुक्त करने तथा पाताल से परमधाम तक का मार्ग सुलभ बनाने के लिए श्री कृष्ण प्रणामी धर्म को अत्याधिक महत्त्व दिया। उन्होंने श्री कृष्ण का सर्व व्यापक अर्थ करते हुए बताया है कि 'कृष्' धातु परम सत्ता वाचक और ण (न्) परमानन्द वाचक होने से श्री कृष्ण को सब के आत्म पति, नित्य, अखण्ड, अनन्त, अविनाशी पूर्णतम सनातन ब्रह्म सत्ता माना गया है१। वह क्षर (नश्वर) एवं अक्षर (अविनाशी) सत्ता से पर अखण्ड अविनाशी दिव्य ब्रह्मपुर धाम परमधाम में अपनी आह्लादिनी शक्ति–श्यामाजी के साथ युगल रूप में विराजमान हैं। शुद्ध सनातन श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके अनुयायी धर्म प्राण सुन्दर साथजी मन–वचन एवं कर्म से

पवित्र भावनाके साथ अपने आराध्य देव अक्षरातीत श्री कृष्ण के श्री युगल चरणों में नित्य प्रणाम कर आत्मकल्याण के लिए निज नाम महामन्त्र का नियमित जाप करते हैं –

"निजनाम श्री कृष्णजी अनादि अक्षरातीत" ।

'सत्य्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः' महानात्मा सत्यके पथ से कदापि विचलित नहीं होते हैं । महामति प्राणनाथजी भी अपने गुरु की आज्ञाका पूर्ण रूप से पालन करते हुए श्री कृष्ण प्रणामी धर्मको विश्व आयाम देने में पूर्णतः सफल हुए हैं । अपने मूल ध्येय तक पहुँचने के लिए वे कभी भी विचलित नहीं हुए । सत्य के पथ पर वे हमेशा आगे ही बढ़ते रहे क्योंकि उनका ध्येय निश्चित था–

"मोहे दिल में ऐसा आइया, ए जो खेल देख्या ब्रह्माण्ड ।
तो क्या देखी हम दुनियां, जो इनको न करें अखंड ॥
अब भली बुरी इन दुनिया की ए जिन लेओ चित ल्याए ।
सुरत पकी करो धाम की, पर आतम धनी मिलाय ॥
मुक्ति दै सब जीवों को, पावे पशु पक्षी नर नार ।
होसी वैराट ए धन-धन, सुख आनन्द अखंड अपार ॥ (किरंतन. प्र. ९६/१९, प्र.६६/१४)

महामति श्री प्राणनाथजी ने भारतीय मनीषियों के सर्वोच्च विचारों का सम्मान करते हुए समाज को व्यापक स्तर पर संगठित व जागृत करने के लिए एकता पर जोर दिया । मानव कल्याण के लिए भावात्मक–क्रियात्मक एवं संगठनात्मक एकता की जरूरत थी महामति श्री प्राणनाथजी ने भाव मंत्र के साथ साथ तारतम वाणी एवं मानव जीवन का मानदण्ड "प्रणाम" का उपहार सम्पूर्ण समाज के लोगों को प्रदान कर एकता की नींव को सुदृढ़ किया । प्रणाम को ही एकता का आधार बनाया तथा उसमें तारतम मंत्र का सुहाग भर कर एक दुर्लभ कार्य किया । अब इसीकी रोशनी से पूरे ब्रह्माण्ड में व्याप्त अज्ञान अन्धकार मिट जाए तथा सभी का जीवन पथ आलोकित हो जाए पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्रीकृष्ण से प्रार्थना करते हैं–

"आलोकित पथ बन जाए, हे जग जीवन अन्तर्यामी ।
अपलक नयन रह जाए, पाकर श्री कृष्ण प्रणामी ॥
पल-पल थिरक उठे हृदय स्पन्दन, दिल की आवाज़ मनमोर में ।
प्रणाम हो हर स्वास हर स्वर में, मन लूटा जाए माखन चोर में ॥
महिमामय जीवन रसधारा, प्रणाम प्रणामी नारा है ।
युग-युग नूतन अधुनातनवन, बरस रहे हज़ारा है ॥

---

१. महामति प्राणनाथ जागनी संचयन-पृ.४४ ॥

२९-श्री प्राणनाथजी का प्रादुर्भाव

वीर प्रसविनी इस मातृ-भूमि में शौर्य-त्याग तथा अपनी तेजस्विताके लिए प्रसिद्ध सर्वोच्च पदपर पहुँचने वाले धर्म के बुलन्द सितारे बहुत ही कम पैदा हुआ करते हैं, जिनका सिर असत्य एवं अधर्म के आगे कभी भी नहीं झुकता । वही अनन्त आत्माओंके सम्वाहक एवं गौरवके विजय प्रतीक बनकर धर्म, राष्ट्र एवं सम्पूर्ण मानव जाति का प्रतिनिधित्व करते हैं । ऐसे ही महान आत्माओं में से "महामति श्री प्राणनाथजी" का नाम आदर के साथ अग्रिम पंक्ति में लिया जाता है । भारत की दिव्य-भूमि ऐसे ही महान आत्माओंके आगमन तथा उनके अपूर्व पराक्रम से नित्य उज्ज्वल व धन्य-धन्य एवं गौरवान्वित हुई है ।

विश्व मानवता एवं सत्धर्म की रक्षा के लिए "हिन्दू धर्म विजय स्तम्भ" के रूप में क्षत्रिय कुलका 'ओज' समय-समय पर इसी रत्नगर्भा भारत माता की कोख से प्रकट होता रहता है । यही क्षत्रिय कुल गौरव 'ओज' नवानगर (जामनगर) के लोहाणा वंशीय परिवार के मानव रत्न "श्री मिहिरराज" (महेराज) ठाकुर में प्रवाहित हुआ । श्री मिहिरराजका जन्म आश्विन कृष्ण चतुर्दशी

रविबार को एक प्रहर दिन चढ़ते वि. सं. १६७५ ता. २६ सितम्बर १६१८ में नवानगर–जामनगर में हुआ था। वे जामराजा के दीवान श्री केशवराय के मंझले (चौथे) पुत्र रत्न थे। उनकी माता का नाम धनबाई था जो अति पावन पतिव्रता शिरोमणि मातृत्त्वकी साक्षात्मूर्ति क्षत्रिय वीरांगना थी–

संवत सोलहसो पच्चतरा, आसो वदि चौदस नाम।
पोहोर दिन चढ़ते बार रवि, प्रगटे धनी श्री धाम॥ (ला. वीतक)

दीवान श्री केशवराय ठाकुर लोहाणा जाति में एक आदर्श एवं प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। उनके प्रति जनता– जनार्दन की अपार श्रद्धा थी। उनका परिवार धन–धान्य एवं संतान आदि से संवृद्ध वैभवपूर्ण था। उनके पाँच पुत्र रत्न थे– श्री हरिवंश ठाकुर, श्री श्यामल ठाकुर, श्री गोवर्धन ठाकुर, श्री मिहिरराज (महेराज) ठाकुर, तथा श्री उद्धव ठाकुर।

३०–शिक्षा एवं दीक्षा प्राप्त करना

ध्रुवताराकी तरह सत्यपथ पर अटल रहकर अपने माता–पिता की आज्ञा का पालन करने वाला इस साहसी एवं परिश्रमी बालक श्री मिहिरराज की शिक्षा–दीक्षा का प्रारम्भ लोहाणा वंश परम्परा के अनुकूल नवानगर–जामनगर में उनके शैशवकाल में ही हो गई थी। अल्पकाल में ही श्री मिहिरराज ने विद्या अध्ययन में अपनी कुशाग्र बुद्धि, तल्लीनता, तनमयता एवं विलक्षण प्रतिभाका परिचय देते हुए, कठिन से कठिन विषय को भी आसानीसे समझते हुए राज्योचित शिक्षा प्रबन्धकी दक्षता प्राप्त की तथा उनके अन्तर्हृदयमें छिपे तेज का परिचय देते हुए बचपनमें ही यह सिद्ध कर दिखा दिया कि वह साधरण बालक नहीं है। वह तो कोई अदृश्य शक्ति है जो किसी महान कार्यके लिए लोहाणा परिवार में प्रकट हुई है।

"श्री मिहिरराज" दयालु, गुणवान, रूपवान, निष्ठावान एवं पितृभक्त होनहार बालक थे। पिता का प्यार व दुलार एवं पतिपरायणा मातृत्वकी साक्षात्मूर्ति परम पावन माता धनबाई की ममता एवं वात्सल्य पाकर वे एक आदर्श, निर्भीक एवं अदम्य हो गए। अल्पायु १२ वर्ष की अवस्थामें उनका सद्गुरु श्री निजानन्दाचार्य स्वामी श्री देवचन्द्रजी महाराज से मिलन हुआ। प्रथम दृष्टि में सद्गुरु ने इस तेजस्वी अलौकिक गुण सम्पन्न बालक में उसी की परात्मा रूप परमधाम की "सखी इन्द्रावती का तेज" समाहित हुए अन्तरात्मा को परख लिया तथा उन्हें तारतम महामंत्र प्रदान किया। अनन्तविभूषित- करूणामूर्ति-प्राणवल्लभ सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी का सानिध्य पाकर तथा उनके आशीर्वाद से श्री मिहिरराज के हृदय की सुसुप्त भावना जागृत होकर प्रज्वलित हो उठी। पल-पल, क्षण-क्षण उनके शरीर में रोमाञ्च होने लगा। सद्गुरु के प्यारे, माता-पिता के दुलारे तथा सृष्टिके सहारे इस होनहार-लाड़ले बालक श्री मिहिरराज ने बाल्यकाल में ही ज्ञान भक्ति तथा नित्य साधना के द्वारा आत्माको जागृत कर ब्रह्मज्ञान के प्रचार-प्रसार तथा आत्माओं की जागृति का उत्तराधिकार प्राप्त किया। वे सदैव अपने प्राण प्यारे गुरुदेव की आज्ञा का पालन करते हुए आत्मा की मुक्ति के लिए सदा चिन्तनशील रहते थे, मन, बुद्धि और चित्तकी एकाग्रता से सद्गुरुके श्री चरणों में प्रणाम करते थे तथा सद्गुरुको ही वे अपने जीवनका आधार मानते थे-

सतगुरु मेरा श्यामजी, मैं अहेनिस चरणें रहूं।
सनमंध मेरा याहीसों, मैं ताथें सदा सुख लहूं। (कि. प्र. ५२/१)

३१-धर्म पत्नी फूलबाई को त्याग देना

छोटी सी उम्रमें श्री मिहिराजका विवाह फूलबाई से हुआ था। वह खूब सूरत रूपवती कन्या थी। श्री मिहिराज खाड़ी देशों में धर्म का प्रचार कर रहे थे उस समय नवानगर में श्री बिहारीजी ने धारा और रामजी भाई को धर्म से निष्कासित किया था। वे दोनों बहुत ही गरीब तथा निम्न जाति के

लोग थे। फूलबाई को उन दोनों दु:खी सुन्दरसाथ पर दया आई अत: उन्होंने श्री कृष्णार्पण कर उन दोनों को प्रसाद दिया। इस कार्यकी जानकारी मिलने पर बिहारीजी, फूलबाईसे नाराज़ हो गए। अत: श्री मिहिरराजसे मिलते ही बिहारीजीने मिहिरराजको कहा कि तुम्हारी पत्नी ने धर्म से निष्कासित लोगोंको प्रसाद देकर धर्म मर्यादाका उल्लंघन किया है। अत: या तो तुम धर्म को त्याग दो या अपनी धर्म-पत्नी। श्री बिहारीजी के इस कठोर आदेश से श्री मिहिरराज, धर्म संकट में पड़गए अत: धर्म बचानेके लिए अपनी प्राणसे भी प्यारी धर्म पत्नी फूलबाई का परित्याग उन्हें कर ना पड़ा तथा स्वामीके त्यागे जाने पर मानसिक यंत्रणा झेलते हुए फूलबाई का प्राणान्त हो गया। मृत्यु के अंतीम क्षण पहले, पत्र लिखकर फूलबाई ने उसकी चिताकी राखमें चरण स्पर्श के लिए अपने स्वामीसे प्रार्थना की थी। इस प्रकारका पत्र श्री मिहिरराजको मिलने पर श्री मिहिरराजने ऐसा ही किया। दूसरी बार वही फूलबाई धोराजी में भाणजी नामक एक व्यक्तिके घर जन्म लेकर पुन: श्री मिहिरराज से मिली तथा धर्म पत्नी बनकर आजीवन उनके साथ रही परन्तु लौकिक विषय वासना में मोह न होने से तेज कुँबरीबाई के नाम से प्रतिष्ठित हुई। उन्होंने अपने पति का सदैब साथ दिया 'बाईजू राज' के नाम से वह प्रसिद्ध हुई।

३२-गुरु भक्ति में दृढ़ता

व्यक्ति के जीवन का प्रभाव सर्वोपरि होता है और वह अकल्पनीय व अमोघ होता है। यदि वह व्यक्ति जो गुरु की आज्ञा का पालन कर अध्यात्म-साधना में उन्मुख होता है,, वही मंगलमय जीवनके सर्वोच्च शिखर को छूकर सात्विक व उच्च चरित्रका निर्माण कर सकता है। सद्गुरु श्री निजानन्द स्वामी श्री देवचन्द्रजी के प्रति श्री मिहिरराजके हृदय में बड़ा स्थान था। वे नियमित सद्गुरु का दर्शन करते थे, उनके श्री चरणों में प्रणाम करते थे, सद्गुरु के मुखारविन्द से निसृत "तारतम्यज्ञान रसामृत" का पान कर मन, वाणी, शरीर और बुद्धिसे धर्म का आचरण करते थे। विनय पूर्वक मीठी-वाणी से सद्गुरुको रिझाते हुए उनके उपदेशको हृदयमें धारण कर अपने आचरण में उतारने का प्रयत्न करते थे। सद्गुरु के प्रति उनका अनुराग व प्रेम भाव इतना अधिक

बढ़ गया था कि उनके बिना वे नहीं रह सकते थे। खाते-पीते, उठते-बैठते सद्गुरु की याद में वे एक-एक पल जीते थे। वहाँ ऐसा वातावरण वन गया था कि दोनोमें अति निकटता बढ़गई। मानो वे दोनों एक ही दिलके दो अलग-अलग अंग हैं ऐसा प्रतीत होता था। गुरु भक्ति के प्रति निष्ठा एवं दृढ़ता की यही पराकाष्ठा श्री मिहिरराज के दिव्य चरित्र में दिखाई देती थी।

३३-श्री मिहिरराज को वैराग्य होना एवं अरब यात्रा

नगरसेठ गांगजीभाई के अग्रज खेता भाई व्यापार के सिलसिले में अरब देश जाकर वहीं वे रहने लगे थे। श्री मिहिरराज के भ्राता श्री गोवर्धन ठाकुर का वि.सं. १७०० में अचानक निधन हो गया। इससे श्री मिहिरराज को दुःख हुआ। दोनों भाइयोंके बीच प्रेम भाव तथा मधुर सम्बन्ध था। इस मृत्यु की घटना से श्री मिहिरराज के दिल में लौकिक विषयों एवं कुटुम्ब आदि सम्बन्धों से मोह का पर्दा उठ गया। आहार, निद्रा छूट गयी तथा सभी विषयों को मन से हटाकर एकान्त स्थल, घरके किसी एक कोने में बैठकर वे प्राणवल्लभ अक्षरातीत धामधनी श्री कृष्ण का ध्यान करने लगे। कठोर साधनाके द्वारा शरीर पीला पड़ने लगा तथा वे बहुत कमज़ोर होगए। पल-पल उनका मन परमधाम के पच्चीस पक्ष में ही विचरण करने लगा। तपाये हुए स्वर्ण के समान उनका चित्त निर्मल, उज्ज्वल और शुद्ध हो गया। उनके हृदयमें यथार्थ प्रेम का अंकुर उत्पन्न हो गया। वे सद्गुरु के धर्मोपदेश का प्रतिपल चिन्तन, मनन, निधि ध्यासन करने लगे। उन्होंने आहार को सीमित कर दिया परन्तु श्री कृष्ण के दर्शन न पाकर उनका हृदय आकुल-व्याकुल होने लगा। उनको विरह हुआ, मन ही मन विचार करने लगे कि सद्गुरुको धामधनी श्रीकृष्णके बार-बार दर्शन होते हैं लेकिन मुझे क्यों नही होते ? वे अपने मन, बुद्धि तथा इन्द्रियों को फटकारने लगे तथा सद्गुरु के श्री चरणोंमें लकुटी की तरह पड़कर भावाविष्ट कातर स्वर में उन्होंने कहा हे धनी सद्गुरु महाराज ! मेरा कौन सा अपराध है ? धामधनी श्री कृष्ण के दर्शन मुझे क्यों नहीं होते ? मिहिरराजके नेत्रोंसे पवित्र अश्रुधारके रूपमें दुःखका सागर उमड़कर बह चला। उनका शरीर अचेतन होकर निजानन्द स्वामीके चरणोंमें

गिर पड़ा। मिहिरराज की ऐसी दशा देखकर सभी सुन्दरसाथके आँखोंसे भी टप-टप आँसूकी बूँदे टपकने लगी। इस प्रकार हृदयकी भयानक व्याकुलता और आँखोंसे निरन्तर बहती हुई सलिलधारासे युक्त उस, नन्हें बालक श्री मिहिरराजको सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीने उठाकर जोरों से हृदयमें चिपटा लिया। इस दृश्य से सद्गुरुको मिहिरराजकी इस दशा पर चिन्ता हुई और उन्होंने विचार किया कि विश्व प्रेम एवं शान्तिके भावी अवदानदाता श्री मिहिरराज को इस आत्म-केन्द्रित भाव-भूमिसे बाहर लाना आवश्यक है। अतः उन्हें वि.सं. १७०३ में खेताभाई को बुलाने अरब देश भेज दिया गया। खेताभाई हीरा, नीलम, पुखराज आदि नंग के व्यापारी थे। वे अरब देशके धनवानोंमें अग्रिम पंक्ति के थे। मिहिरराजने उन्हें सद्गुरुका संदेश देकर स्वदेश लौटनेका आग्रह किया परन्तु कुछ ही दिन के वाद अचानक खेताभाई की मृत्यु हुई। खेता भाई का व्यवसाय बड़ा लम्बा-चौड़ा था, उनके कै दूकाने थीं। कुछ समाज़ कंटकोंने उनके दुकानोंमें ताले जड़ दिए। श्री मिहिरराजने खेताभाईकी सम्पत्ति के दावेदार होकर अरब देशके बादशाह से गुहार लगाई। अरब देश का बादशाह श्री मिहिरराजकी बुद्धिमता एवं न्यापूर्ण तर्क एवं मांग से प्रभावित हो कर अपने देशके व्यापार मण्डल के कर्मचारियों को फटकार-एवं जाँच पड़ताल कर खेताभाई की सम्पत्ति को श्री मिहिरराजके हस्तक कर दिया। ४ वर्ष तक मिहिरराज अरब देश में ही रहे। वहाँ उन्होंने अरब देश की संस्कृति, धर्म, साहित्य एवं न्याय प्रणाली को करीब से देखा।

३४-मिहिरराज का सद्गुरु से वियोग होना

अरब यात्रा से लौटनेके बाद श्री मिहिरराज ने अरब देश से प्राप्त खेताभाई की सम्पत्ति को सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी के चरणों में अर्पण कर दिया। गुरु-शिष्य की निकटता एवं अत्याधिक प्रेमभाव को देख कर उनके पवित्र रिश्तों में दरार पैदा करने के लिए कुछ विरोधी लोगोंने एक साज़िश रचकर षड़यन्त्र के जाल में श्री मिहिरराजको फँसा दिया तथा कई आरोपों के सिल-सिले में

उन्हें जामनगर के कारावास में दो महीने तक नज़रकैद होना पड़ा। जाँच पड़ताल एवं वारीकी निरीक्षण के द्वारा जब उनपर लगाए गए सभी आरोप झूठे सावित हुए तो उन्हें मुक्त कर दिया गया। कारावास से मुक्त होते ही श्री देवचन्द्रजी महाराज से मिलने के लिए श्री मिहिरराज गए, सद्गुरु के श्री चरणोंमें उन्होंने प्रणाम किया परन्तु सद्गुरुजी बोलेही नहीं। जाल साचियों के चक्कर से सद्गुरु मिहिरराज के प्रती नाराज़ हो बैठे थें। जब सद्गुरु मिहिरराज से रूठगए इस बात की जानकारी श्री मिहिरराज को पूर्ण रूपसे हुई तो उन्हें बड़ा दुःख हुआ। अतः खिन्न एवं उदास होकर वे ध्रोल चले गए तथा कलाजी राजाके दीवान पद् को स्वीकार करते हुए नौकरी करने लगे। नौकरीके सिलसिले में वे वि. सं. १७०७ से १७१२ तक ध्रोल में ही रहे।

३५-विन्दु पुत्र एवं नाद पुत्र को जिम्मेदारी सौपना

श्री अनन्त विभूषित सद्गुरु श्री निजानन्द स्वामी ने श्री विहारी जी को अपने विन्दु पुत्र के रूप में पैतृक सम्पत्ति का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। इसी तरह सद्गुरु ने श्री मिहिरराज को ध्रोल से बुलाकर २२ दिन तक धर्म का गुप्त रहस्य समझाते हुए उन्हें नाद पुत्र (धर्म पुत्र) के रूप में अपना उत्तराधिकारी की घोषणा कर श्री कृष्ण प्रणामी धर्म को विश्व आयाम देने के लिए धर्म प्रचार का सम्पूर्ण दायित्व श्री मिहिरराज को सौंप दिया। तथा श्री मिहिरराज को अपने कुटुम्बिजनों से मिलने की अनुमति दी। उसी दिन वि. सं. १७१२ में भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी बुधवार को अर्ध रात्री के बाद निजानन्द स्वामी का धामगमन हो गाया। दूसरे दिन श्रीमिहिरराजको इस घटनाकी जानकारी मिली तो वे सद्गुरुके वियोगसे अत्यन्त दुःखी हो गए। मन ही मन आकुल-व्याकुल होकर करुण क्रन्दन आवाज़में सद्गुरुको पुकारने लगे-**"आवोजी वाला मारे घेरे आवोजी".....।**

३६-गुरूपुत्र श्री बिहारीजी को पदासीन करना

सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी के देह विलय के पश्चात् वि. सं. १७१५ में नगरसेठ श्री गांगजीभाई के शुभ गृह जहाँ निजानन्द स्वामी धर्म चर्चा करते थे उस अति पावन भूमि "चाकल मंदिर" में गुरु गद्दी पर श्री बिहारी जी को आसीन कर उनका सम्मान किया गया१ । यह सम्पूर्ण उत्सव का कार्य श्री मिहिरराज ने हर्षोउल्लास के साथ किया तथा आत्म जागृति के लिए श्री मिहिरराज ने ज्ञानामृत की वर्षा कर सुन्दरसाथ को आनन्दित किया । श्री मिहिरराज के दैवि–आत्मा एवं अध्यात्म बल से प्रभावित होकर बिहारीजी के दिल में संशय होने लगा अतः उन्होंने श्री मिहिरराज को धर्म प्रचार के लिए प्रोत्साहित नहीं किया । सद्गुरु निजानन्द स्वामी के निर्देशों को ध्यान में रखकर श्री मिहिरराज ने श्री कृष्ण प्रणामी धर्म प्रचार का उत्तरदायित्त्व अपने उपर लेकर आत्म–जागरण महामन्त्र का शंखनाद किया । उस समय जामनगर में दीवान पद पर रहकर राजनैतिक व प्रशासनिक जिम्मेदारी का निर्वहन भी उन्हें करना पड़ा था ।

---

१. बरस तीनलों किने न उचारी, तब देखी श्रीजी साहेब विचारी ।
सम्बत सत्रह पन्द्रोत्तर आए, गादी श्री विहारीजी पधराये ॥ (नवरंग स्वामी)

३७–तारतम वाणी का अवतरण

सद्गुरु निजानन्द स्वामी श्री देवचन्द्र महाराज के धामगमन से श्री मिहिरराज को आघात लगा । वे सद्गुरु के वियोग में तड़प रहे थे । उसी समय उनके पिता श्री केशवरायजी ने भी अपने नश्वर शरीर को त्याग दिया । जामराजा ने श्री मिहिरराज की प्रतिभा को देखते हुए उन्हें पिता के स्थान पर दीवान पद सौंप दिया । श्री मिहिरराज पूर्ण ईमानदारी एवं कुशलता के साथ शासन प्रबन्ध का संचालन कर रहे थे । धर्म प्रचार का कार्य उस समय ठप हो गया था । अतः सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी के नाम पर एक भव्य महोत्सव मनाने की तैयारी में श्री मिहिरराजजी जुट गए । निजी सम्पत्ति का सदुपयोग कर आयोजन सम्बन्धि सभी प्रकार की तैयारी पूर्ण हो सुकी थी । एक तो शासन प्रबन्ध संचालन में उनका विशेष ध्यान रखते हुए जनता की खुशी एवं भलाई के लिए कुशल नेतृत्त्व की

जवाब दारी अपने सिर पर थी दूसरा महोत्सव को सफल बना कर धर्म का प्रचार करना भी उतना ही महत्त्व का कार्य था श्री मिहिरराज ने दोनों कार्यों का संचालन बड़ी बुद्धिमता एवं धैर्यता से की। उनका उत्तम शासन प्रबन्ध स्वार्थी तत्त्वों को रास न आया। वे उन्हें शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा पहुँचाने लगे। समाज कंटकों द्वारा जामनगर के वज़ीर को इनके विरुद्ध राज्य की सम्पत्ति हड़प ने का आरोप लगा कर भड़काया गया। जिससे इन्हें 'हब्सा कारागार में नज़रबंद कर दिया गया। मिथ्या आरोप से व्यथित श्री मिहिरराज ने अपने हृदय की पीड़ा को परब्रह्म के वियोग की पीड़ा में ढाल कर पुनः पूर्णब्रह्म परमात्मा के योग में जोड़ कर अपने मुख कमल से तारतमवाणी रूप अलौकिक लीलारस स्त्रोत-चेतन प्रवाह के रूप में बहाना शुरू कर दिया। उनके द्वारा रचित श्री रास आध्यात्मिक विरह की अनुपम कृति बन गई। 'श्री रास' महामति के वेदनापूर्ण संसार और संस्कार को आनन्द प्रदान और अमृत्व प्रदान कराने वाली सम्मान्य कृति ही नहीं परम प्रियतम के विमल प्रेमानुग्रह का निर्मल नैवेध भी है१।

"श्री तारतम वाणी" का अवतरण 'हब्सा' कारागार में श्री मिहिरराज के पवित्र मुख कमल से प्रथम-"श्री रास ग्रन्थ" के रूप में प्रारम्भ हुआ। क्रमशः प्रकाश, षटऋतु, कलस गुजराती की दो चौपाई तक हब्सा में ही अवतरित हुई। वाकी चौपाईयाँ जागनी यात्रा के समय -आद्यधर्म पीठ श्री ५ नवतनपुरी धाम नवानगर-जामनगर से प्रारम्भ होकर श्री ५ महामंगलपुरी धाम सूरत तथा यात्रा का अंतिम पड़ाव श्री ५ पद्मावतीपुरी धाम पन्ना तक क्रमशः अवतरित हुई कुल चौपाईयोंकी संख्या है-१८७५८ अठारह हजार सात सौ अठावन।

श्री मिहिरराज ने धैर्यतापूर्वक प्रतिकूल परिस्थितियों को सहन किया। अन्ततः सत्य उजागर हुआ और उनके समस्त विरोधी उनसे परास्त हो गए जाम सत्ताने अपनी भूल स्वीकार की और "सिरोपा" से सम्मानित कर उन्हें विदा किया।

---

१. महामति श्री प्राणनाथ एक युगान्त कारी व्यक्तित्व-डॉ. विद्यावती मालविका -पृ.३ ॥

३८-धर्मपीठ की स्थापना करना

कारावास से मुक्त होने के पश्चात् ब्रह्मज्ञान के प्रचार-प्रसार तथा 'प्रणाम' के सर्व व्यापक अवधारणा का स्पष्टीकरण करने के लिए श्री मिहिरराज ने देश विदेश की यात्रा की इसी यात्रा में उन्होंने सूरत में श्री ५ महामंगलपुरी धाम धर्मपीठ की स्थापना की। समय-समय पर अवतरित शक्तियों को समुच्चय रूप में देखा गया और इस महान अवतारी मनीषा को महामति प्राणनाथ की संज्ञा तथा हरिद्वार कुंभ मेले के अवसर पर वि.सं. १७३५ में भारत के हिन्दू धर्म के धर्माचार्यों ने प्राणनाथजी की प्रखर व्यक्तित्व एवं कृतित्व से प्रभावित होकर "श्री विजयाभिनन्द निष्कलंक बुध" की उपाधि से अलंकृत करते हुए ऐतिहासिक सम्मान किया। इसी जागनी यात्रा में श्री प्राणनाथजी ने पवित्र भूमि पन्ना में श्री ५ पद्मावतीपुरी धाम मुक्तिपीठ की स्थापना की इस प्रकार श्री कृष्ण प्रणामी धर्म-निजानन्द सम्प्रदाय में "आद्य धर्म पीठ श्री ५ नवतनपुरी धाम" (खिजड़ा मंदिर नवानगर-जामनगर) "द्वतीय धर्मपीठ श्री ५ महामंगलपुरी धाम" (मोटा मंदिर) सूरत तथा तृतीय "मुक्ति पीठ श्री ५ पद्मावतीपुरी धाम" पन्ना। ए तीनों पीठ क्रमशः बीज भूमि-कर्मभूमि एवं मोक्ष भूमि स्वरूप प्राचीन तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध हुए। श्री कृष्ण प्रणामी धर्म की नींवको अनन्त विभूषित निजानन्द स्वामी श्रीदेवचन्द्रजी महाराजने रखी तथा उन्होंने श्री मिहिरराजको मानव जीवनके उत्कर्ष एवं विश्वकल्याण के लिए प्रेरित करते हुए दृढ़ता पूर्वक कहा था कि हे मिहिरराज ! चौरासी लाख योनियोंमें मनुष्य जीवन सर्वश्रेष्ठ है किन्तु मनुष्य योनि प्राप्त करने पर भी जब-तक प्रेम लक्षणा भक्ति मनुष्यको प्राप्त होती है तब-तक उस जीवनको निष्फल मानना चाहिए। जगत् में प्रेम लक्षणा भक्तिकी साधना द्वारा परमात्माकी आरधना असंख्य आत्माओं ने की हैं, उन भक्ति साधना करने वाले साधकोंमें सर्वश्रेष्ठ स्थान व्रजमण्डल की गोपियों का रहा है। अतः गोपी भाव को महत्त्व देते हए धर्म का प्रचार करना। इसी बात को ध्यान में रखते हुए श्री कृष्ण प्रणामी धर्मको विश्वव्यापक बनानेके लिए श्री मिहिरराजने आत्म-जागरण महामंत्रका शंखनाद किया था। आज उसी का परिणाम है कि राष्ट्रीय अन्तराष्ट्रीय क्षेत्रमें वर्तमान श्री कृष्ण प्रणामी धर्म (निजानन्द सम्प्रदाय) के

लगभग ६०० से भी अधिक केन्द्र कार्यरत हैं जो मानव कल्याण, मानव एकता तथा मानवताकी रक्षा के लिए प्रणाम, प्रेम एवं तारतम ज्ञान का संदेश दे रहे हैं। उपर्युक्त तीन धर्मपीठ पवित्र तीर्थस्थान के अलावा लोक जागृति, व्यासन मुक्ति, स्वास्थ्य उपचार, पर्यावरण संरक्षण, जलसंचयन, साक्षरता, शैक्षिक कार्यक्रम, धर्म साहित्य प्रकाशन आदि द्वारा समाज उत्कर्षका कार्य करने वाली प्रमुख संस्थाएँ निम्न प्रकार हैं–

१. श्री प्राणनाथ मिशन दिल्ली

२. गुरुजी प्रणामी मिशन ट्रस्ट कालिम्पोंग

३. श्री कृष्ण प्रणामी जनकल्याण ट्रस्ट भिमानी

४. बाबा दयाराम ट्रस्ट सोसायटी करनाल

५. विश्व प्रणामी परिषद् हरिद्वार

६. प्राणनाथ सेवाश्रम ट्रस्ट वेटरोड़ सूरत

७. श्री कृष्ण प्रणामी राज सेवा संस्थान जैतना (राज.)

८. प्रणामी पञ्चायत जयपुर (राज.)

९. श्री कृष्ण प्रणामी सेवा समिति सेवा ट्रस्ट नवतनधाम काठमांडौ नेपाल

१०. श्री कृष्ण प्रणामी मिशन (यू. एस. ए.)

११. श्री कृष्णप्रियाचार्य मेमोरियल ट्रस्ट भरोड़ा

12. Shri Krishna Pranami Association-America

13. Shri Krishna Pranami Association-England

14. Shri Krishna Pranami Association- Canada

15. Radha Krishna Organization Houston-(U.S.A)

३९–सार्वभौमिक प्रतिभा का प्रथम व्यक्तित्त्व महामति प्राणनाथ

कठिनाइयाँ एवं विपदाएँ जीवन का निर्माण करती हैं। संसार में आजतक जितने महान पुरुष हुए हैं वे सभी दिल को दहला देने वाली किसी न किसी समस्याओं का सामना करते हुए उसे

स्वीकार कर तथा चुनौति देकर ही अपने सर्वोच्च एवं पवित्र साधाना द्वारा अपनी मंज़िल प्राप्त करने में कामयाव हुए हैं। लोहाणा वंशी परम्परा से अपनी जीवन यात्रा शुरु करते हुए श्री मिहिरराज हिन्दू धर्म के शास्त्रीय–सैद्धान्तिक परम्परा की दृष्टिकोण से "श्री विजयाभिनन्द निष्कलंक बुध अवतार", सामी–पाश्चात्य परम्परा की दृष्टिकोण से आखरी महम्मद अथवा इमाम मेहदी, इसाई धर्म मान्यता के दृष्टिकोण से द्वतीय ईसा, विरही आत्मा के दृष्टि कोण से ईन्द्रावती, आस्था एवं विश्वास के दृष्टि कोण से इन्हें प्राणनाथ के रूप में देखा गया। अनेक नाम के उपाधी से परिभाषित होते हुए भी वे चिन्मय सत्ता को अपने भाव–स्वरूप पर घटित करने वाले सार्वभौमिक प्रतिभा के प्रथम व्यक्तित्त्व देदीप्यमान अनन्त सूर्य सदृश ब्रह्म की प्रभा के रूप में प्रतिष्ठित हुए। मध्य कालीन भारतीय मनीषियोंमें महामति श्री प्राणनाथजीका अनूठा व्यक्तित्व रहा है। वे राजनैतिकक्षेत्रमें सफल राजनीतिज्ञके रूपमें छत्रसालका नेतृत्व करते थे। सामाजिक क्षेत्रमें अच्छे समाज सुधारक तथा मानवमूल्योंके संरक्षकके रूपमें उभरे एवं धार्मिक क्षेत्रमें एक क्रान्तदर्शी युगपुरुष रहे तो आध्यात्म क्षेत्रमें अक्षरातीत श्रीकृष्ण के आवेशयुक्त होनेसे अपने अनुयायियोंके प्राणवल्लभ–प्राणनाथ कहलाये। साहित्यकी दृष्टिसे देखेतो वे ऐसे मनीषि हैं जिन्होंने चौदह ग्रन्थोंसे संकलित १८७५८ चौपाई वाली श्री तारतमसागर–श्रीकृष्णका वाङ्मय स्वरूप नामक ग्रन्थनिधि जगत् को सौंपी।

४०–महामति श्री प्राणनाथजी का विश्व देन

१. महामति श्री प्राणनाथजी ने विश्व को प्रथम बार एक बृहद १८७५८ चौपाइयाँ युक्त "तारतम वाणी" (श्रीकृष्ण का वाङ्मय स्वरूप) का उपहार दिया, जो वेद एवं कतेब पक्ष की अवधारणाओं को व्यापक रूप में स्पष्टीकरण करने वाली मानव एकता एवं अखंण्डता के लिए अखिल विश्व का आहवान करने वाली नये सत्य–सूर्य की मंगल भविष्य वाणी है।

२. गीता, भागवत एवं उपनिषदों में वर्णित 'क्षर अक्षर तथा अक्षरातीत' एवं कुरान में वर्णित 'ला–इल्लाह–इल्लिल्लाह' इन दोनों अवधारणाओं में साम्यता स्थापित करते हुए विभिन्न सम्प्रदायों,

अखाड़ों, संकीण गुटों और मत वाद के भँवर से निकाल कर पूरी मानवता को वृहत्तर मानव धर्म एवं 'एकेश्वर वाद–एकमेवादितीयं ब्रह्म' का संदेश देते हुए विश्वके सभी धर्मग्रन्थमें इसी मतकी मान्यता प्रदान करने तथा सम्पूर्ण मानवमात्र के कल्याणके लिए भाषा एवं जातिके भेद को छोड़कर विश्वधर्मरक्षामंच पर आनेके लिए सभीको आह्वान किया। विश्व फलक पर अगर महामति श्री प्राणनाथजी के विचार पर ग़ौर करें तो उनका देन मानव जाति के लिए एक वरदान सावित होगा।

३. महामति श्री प्राणनाथजी ने धर्म के एक ऐसे क्रान्तिकारी मार्ग का अनुसरण करने का आग्रह किया जिसमें साम्प्रदायिक जाति–पाँति, वर्ण–वर्ग और भाषायी भेद–भावों को भूलकर सभी साथ–साथ चल सकें, सबका सम्मान हो सके अतः विश्वको प्रणाम का उपहार दिया।

४. महामति श्री प्राणनाथजी ने ब्रह्म को साकार–निराकार से पर शुद्ध साकार रूप स्वलीला द्वैत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया तथा '**सुख शीतल करुँ संसार**' का संदेश विश्व वासी को दिया।

५. उपासना में मूर्ति पूजा को प्राथमिकता न देते हुए महामति श्री प्राणनाथजी ने मानसिक पूजा को सर्व श्रेष्ठ पूजा बताया तथा व्यवहारिक सेवापूजा को भी महत्त्व दिया।

६. आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वति ने अपनी रचना एवं धर्मप्रचारमें हिन्दी भाषाका उपयोग किया। २७५ वर्ष पूर्व ही महामति श्री प्राणनाथजीने हिन्दी भाषाको राष्ट्रकी सबसे बड़ी भाषा के रूपमें घोषणा करदिया कि यही पवित्र भाषा है, इससे ही राष्ट्रीय एकता का सम्भव है। उनहोंने अपनी रचनाओं में हिन्दी भाषाका ही उपयोग किया जो जनसाधारण के लिए सुलभ थी–

बिना हिसाबे बोलियाँ, मिने सकल जहान।
सबको सुगम जानके, कहूंगी हिन्दुस्थान॥
बड़ी भाषा एही भली, जो सबमें जाहेर।
करने पाक सबन को, अन्तर मांहें बाहेर॥ (तारतम सा. सनंध प्र. १/१५/१६)

७. महामति श्री प्राणनाथजी का विचार, मात्र युग सापेक्ष नहीं है, आजभी उतनाही प्रासंगिक है जितना उनका उस युगमें प्रभाव था। उनकी वाणीसाहित्य एवं विचारोंमें सनातन तत्त्व पर्याप्त मात्रा में मौजूद है। अतः यह सनातन है, सभीके लिए तीनों काल–(भूत–भविष्य–वर्तमान) में महत्त्व रखता है।

इस प्रकार महामति श्री प्राणनाथजी के अनेकों उपहार को कई सन्दर्भों में देखा जा सकता है जिसका मूल उद्देश्य सामाजिक–धर्मिक एवं वैश्विक सन्दर्भ में मानव एकता के लिए प्रस्तुत किया गया है।

४१–प्रेम लक्षणा भक्ति

अखिल सौन्दर्य–माधुर्य रसाम्बुधि रसराज परम सुखस्पर्श–परम मनोहर आनन्दकन्द सच्चिदानन्द श्री कृष्णचन्द्र को रिझानेवाली तथा मन मोहिनी मधुरातिमधुर सच्चिदानन्द रसमग्न कराने वाली भक्ति–जिसको पाकर हृदय थिरकने लग जाता है, प्रफुल्लित होकर मनमोर नाच उठता है, हृदयका माधुर्य भाव छलक–छलक कर प्रेम प्रवाह बन जाता है, हृदय चमन में सहस्त्रदल परिपक्व फूल की तरह मासूम चेहरा खिलने लग जाता है। तथा निर्मल हृदयाकाश में भावभरा समुज्ज्वल प्रेम राज्य खड़ा हो जाता है। जहाँ मधुर–मधुर मुसकान करने वाले अक्षरातीत श्री कृष्ण सिवा और कुछ नहीं दिखता एवं सांसारिक विकार नष्ट हो जाने से साधक श्री कृष्णके माधुर्यातिमाधुर्य प्रेमामृतरसमें डूब जाता है। उस प्रेमरसामृत सिन्धु से उसका लोभी मन एक–एक क्षण के लिए भी नहीं हटना चाहता। ऐसी मनको मोहित करने वाली मधुरा भक्ति को प्रेम लक्षणा भक्ति कहा गया है।

इस मधुरा–भक्ति–प्रेमा भक्ति अर्थात् अलौकिक परमानन्द–सुधा–धार नित्य नवीन आनन्द दायिनी 'माधुर्य भाव की भक्ति का शाश्वत रूप एकमात्र 'प्रेम' है। यह जीवन का सर्वोपरि–अमोघ व एक विलक्षण तत्त्व है। यह भावमय मधुर स्नेह का बन्धन है। यह आत्म समर्पण प्रेमिका के पवित्र दिल से पैदा होता है। तथा अपने प्रेमी को प्रेमपास में बाँध देता है। परन्तु यहाँ लौकिक देह की मिलन की छट–पटी नहीं है। यह सर्वथा अप्राकृत है। यहाँ तो भाव की चरमावस्था है, अतः यहाँ केवल जागृत भावदेहका मिलन है। जहाँ समुज्ज्वल मंगलमय वातावरण के मंगल आलोक में प्रेमी एवं प्रेमिका का दिव्य मिलन है। यहाँ प्रेमी स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्णचन्द हैं, तथा प्रेमिका उनकी ही आह्लादिनी शक्तिरूपा श्यामाजी महारानी है तथा उनके साथ–साथ १२ हजार ब्रह्मांगनाएँ हैं। यह प्रेम, लोक के प्रेम से सर्वथा विलक्षण तत्त्व है, नित्य एकरस, अखण्ड़ और सतत प्रवाहमान, साधक के लिए परमात्मा के प्रति 'प्रेम' अथवा 'इश्क' ही सर्वस्व है१ ।

ए वतनी सों गुझ कीजिए, जो खैंचे तरफ वतन ।
प्रेमैं में भीगे रहिए, पीउ सों आनन्द घन ॥ (कि. प्र. ३४/चौ.३२)
इसक बसे पिया के अंग, इसक रहे पिउ के संग ।
प्रेम बसत पिया के चित्त, इसक अखंड हमेसा नित ॥ परि. प्र.१ चौ. ११)

महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं कि ब्रह्मांगनाओं के परमाराध्य पियाजी हैं। अतः उनके हृदयों में प्रेमरस ही छलकता है। वे एक–एक पल, एक–एक श्वास का प्रयोग अपने पियाजी की प्रसन्नता एवं सेवाके लिए ही करती है, उनका चित्त पिया को छोड़कर और कहीं जाता नहीं है, तन–मन–धन यौवन श्री पियाजी के प्रति सहज समर्पित है। अतः वे अपने पियाजी के लिए सब कुछ त्याग करने को तैयार हैं–

और सबन सो चित्त भंग, एक पियाजी सो रस रंग ।
प्रेम पियाजी के अंग भावे, पिया बिना आपको भी उडावे ॥

प्रेम आतम दृष्टि न छोड़े, प्रेम बाहेर दृष्टि न जोड़े ।
प्रेम पिया के चितसों चित न मोडे, प्रेम और सबन सों तोड़े ॥ (परिक्रमा.१/४३,४५)

जगत् का चित्र चित्तसे मिट जाने के कारण वह भक्त किसी भी लौकिक (स्मार्त) अथवा वैदिक (श्रौत) कार्य के करने लायक नहीं रह जाता। इससे वे सब स्वयमेव छूट जाते हैं। इस प्रकार प्रेमलक्षणा भक्ति का वर्णन सुन्दरदास जी के निम्न पक्तियों में भी देखा जा सकता है२–

न लाज तीन लोककी, न वेद को कह्यो करे ।
न संक भूत-प्रेत की, न देव जच्छते डरै ॥
सुनै न कान और की, द्रसै न और इच्छना ।
कहै न बात और की, सुभक्ति प्रेम लच्छना ॥

---

१. महामति प्राणनाथ मनीषा–डॉ. वीणा भगत पृ–५२
२. प्रेम दर्शन–हनुमान प्रसाद पोद्दार. पृ–३२

४२–काम एवं प्रेम में अन्तर

व्यक्ति के जीवन का प्रभाव सर्वोपरी होता है तथा वह अमोघ है। परन्तु भक्ति रहित जीवन एक शुष्क पत्ता की तरह है। भक्ति साधना ही मानव जीवन को अलंकृत करती है। गोपांगनाओं के पवित्र हृदय में, दिव्य त्यागमय प्रेम सम्बन्ध शब्दातीत था। उनके हृदय में 'स्व' की पूर्णतः समाप्ति है वहाँ भोग भावना भी नहीं है, केवल समर्पण है इसी में विशुद्ध प्रेम उदय होता है अतः वहाँ एक प्रियतम सिवाय कुछ नहीं है। चूंकि गोपिकाएँ पढ़ी लिखी नहीं थी। परन्तु उन भोली–भाली गोपांगनाओं के प्रेम में वशीभूत होकर श्याम सुन्दर को आना ही पड़ा। पूर्ण पुरुषोत्तम भी साधारण बालक की तरह गोपियों के साथ क्रीड़ा करने लग गए। भक्त रसखान के शब्दों में देखें–

सेस, महेस, गनेस, दिनेस सुरेसहु जाहि निरंतर ध्यावैं ।
जाहि अनादि अनंत, अखंड, अछेद, अभेद सुवेद बतावैं ॥
नारद से सुक-व्यास रटैं, पचि हारे, तउ पुनि पार न पावैं ।
ताहि अहीरकी छोहरियाँ छछिया भरि छाछ पै नाच नचावैं ॥

विषय विमोहित प्राणी काम को ही प्रेम मानकर पाप के दल-दल में फँस जाते हैं । काम हलाहल जहर मिला हुआ मधु है, प्रेम अमृत है । काम सीमित है, प्रेम असीमित है । काम खण्ड है, प्रेम अखण्ड है । काममें इन्द्रियतृप्ति, इन्द्रिय चरितार्थता है, प्रेम में तन्मयता, प्रियतम-सुख की नित्य प्रबल आकांक्षा है । काम से विषय की प्राप्ति होती है, प्रेम से परमात्मा की प्राप्ति होती है१ । श्री कृष्ण प्रणामी धर्म-निजानन्द सम्प्रदाय में धर्म-एवं भक्ति साधना के लिए गोपीभाव को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है । जब तक भक्ति साधना में गोपी भाव का उदय नहीं होता तब तक उस भक्ति को प्रेम लक्षणा भक्ति नहीं कहा जा सकता है । गोपिकाओं के लिए यह भवसागर गौ-वत्स के चरण चिन्हों (खुर से बने गड्ढे) में भरे जल के समान तुच्छ हो गया । वे उसे सहज ही पार कर गई । उनके मार्ग में सांसारिक माया, मोह बाधा न बन सका२-

सो फेर कह्यो गौपद बछ, यों भवसागर हो गयो तुछ ।
एता भी ना दृष्टें आया, पर लिखने को नाम धराया ॥ प्रकाश हि. ३२/२६)

गोपियों का मन श्री कृष्णमय हो गया था । उनकी वाणी से श्री कृष्ण की चर्चा के अतिरिक्त अन्य कोई बात नहीं निकलती थी । उनके शरीर से केवल श्री कृष्ण के लिए ही चेष्टाएँ हुआ करती थीं । उनका रोम-रोम श्री कृष्ण मय हो गया था । वे इतनी तनमय हो जाती थीं कि उन्हें अपने शरीर की सुधि भी नहीं रहती थी-

मन में मोहन मोहन में मन, मन मोहन जब एक हुआ ।
व्याप्य-व्यापक अब भेद नहीं, मन मागे फिर किससे दुआ ?
मन मोहन सूरत बसी दिल भीतर, अब औरन सो मन लागे क्या ?

मन मस्त हुआ मन मोहन पर, अब भाव औरन का जागे क्या ?
रसमगन हुआ मन रस में लग-लग, मन मोहन तो रस अमृत है ।
श्याम सुन्दर अनूप रस स्पर्श से, जमुना जल भी चरणामृत है ।
ब्रह्म प्रिया नित नव रस में क्यों डूबती, कैसा अमृत अधरामृत है ?
पिउ पिउ बोलत कोयल नाचे, सखियाँ पावत वचनामृत है ।
श्याम सुन्दर की लीला न्यारी, नेहकलंक प्रेमामृत है ॥

---

१. श्री राधा माधव चिन्तन-हनुमान प्रसाद पोद्दार-पृ-८३३
२. धर्म समन्वय उद्गाता महामति प्राणनाथ-डॉ. कमला शर्मा-पृ.८७

४३-पतिव्रत भाव

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म में पतिव्रत भाव को ही प्रेम लक्षणा भक्ति का मूल अंग बताया गया है। जिस प्रकार पति परायण स्त्री स्वप्न में भी पर पुरुष का चिन्तन नहीं करती उसी प्रकार माधुर्य भाव भक्ति में एक परमेश्वर के अतिरिक्त अन्य-देवी-देवताओं की भक्ति नहीं की जा सकती। यह भाव स्त्री-पुरुष दोनों अपना सकते हैं। श्री कृष्ण प्रणामी सम्प्रदाय में स्त्री-पुरुष दोनों ही परब्रह्म परमात्मा को 'पिया' 'प्रियतम' 'धाम-धनी' 'पिउजी' वालाजी' 'श्री राजजी' आदि सम्बोधनों से सम्बोधित करते हैं। ब्रह्मात्माओं का सम्बन्ध परमधाम से ही माना गया है। ब्रह्मात्माएँ उसी परमधाम से अक्षर ब्रह्म की लीला देखने के लिए सुरता के रूप में, इस धरती (कालमाया के ब्रह्माण्ड) पर अवतरित हुई है। श्री कृष्ण प्रणामी धर्म में 'पूजा' पूर्णपुरुषोत्तम साक्षात् अक्षरातीत श्री कृष्ण की होती है। जड़ वस्तु मूर्ति आदि की पूजा सर्वथा निषेध है। पूजा चेतन की होनी चाहिए तत्त्व दर्शी ऋषि-महर्षिगण एवं ज्ञानीपुरुष सभी लोग चेतन की पूजा को ही महत्त्व देते हैं, जो अखण्ड मोक्ष की

कामना रखते हैं। अतः श्री कृष्ण प्रणामी मंदिरों में मूर्ति की प्रतिष्ठा नहीं होती हैं। मूर्ति के स्थान पर साक्षात् अक्षरातीत का वाङ्मय स्वरूप 'श्री तारतम वाणी' को पधराकर वाघावस्त्र, वंशी, मुकुट, माला आदि से पवित्र श्रृंगार कर मानसिक पूजा करने का विधान है, फिर भी व्यवहारिक रूपमें सेवापूजा करनेकी परम्परा भी है, भक्त अपनी पवित्र भावना प्रेम एवं करुणा वस 'श्रीराजश्यामाजी' की आरती करनेके बाद उत्तम व्यञ्जन तथा फलादि से युक्त थाली को सजाकर भोग धराते हैं भोग लगजाने के बाद प्रसाद वितरण किया जाता है।

श्रीमद्भगवद्गीता के १५ वें अध्याय पुरुषोत्तम योग के १६,१७,१८,वें श्लोक में उत्तम पुरुष पूर्णब्रह्म परमात्मा का परिचय दिया गया है। अतः उपाशनीय ब्रह्म वही है जो क्षर (नाशवान) से पर अक्षर (अविनाशीब्रह्म) तथा उससे भी परे उत्तम पुरुष के रूप में परमधाम में विराजमान हैं। वह परमधाम, श्वेतद्वीप–विष्णु लोक, अखण्ड विन्द्रावन तथा अक्षरधाम से भी परे हैं– (अक्षरात्परतःपर) परमधाम में होते हुए भी अपनी त्रिगुणमयी माया विग्रह से चौदह लोक ब्रह्मांडमें व्याप्त होकर ईश्वर रूप से सभी का भरण पोषण करते हुए समग्र ब्रह्माण्डमें सत्ता रूप से वही 'पूर्णब्रह्म स्वरूप अक्षरातीत श्री कृष्ण' व्यापक हैं। तथा उस परब्रह्म परमात्मा का स्वरूप सच्चिदानन्दमय है। वह नित्य, अविनाशी अव्याक्त रूप में एक ही है। परमधाम में भी प्रेम लीला हेतु श्यामा विग्रह एवं १२ हजार ब्रह्मांगनाओं एवं पच्चीस पक्ष परमधाम का जो विस्तार है वह सब अलौकिक अनिर्वचनीय आनन्दमयी लीलाओंका विस्तार है। वहाँ का कण–कण सब कुछ जो भी प्रतिभाषित होता है सभी चिनमय–चेतन पदार्थ हैं। वह सब अक्षरातीत श्री कृष्ण का हि दिव्य हृदय है, तथा अनेक रूप में प्रतिभाषित होते हुए भी एक है, इसी लिए उनको स्वलीला द्वैत कहा गया है। श्री कृष्ण प्रणामी धर्म में स्वलीलाद्वैत सिद्धान्त को ही मूल रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। अतः तत्त्व से पूर्णब्रह्म परमात्मा को पहिचान कर अनन्य भाव से उपासना करने पर ही अखण्ड् मोक्ष की प्राप्ति होती है। यही परा प्रेम लक्षणा–प्रेम लक्षणा भक्ति का सार है। इसीलिए महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं जो पतिव्रता नारी होती है उसका चित्त अन्यपुरुष में नहीं होता है। वह तो

अपने पति की ही अनन्य भाव से सेवा करती है उसके लिए अपने पति ही सब कुछ है। पति की आलोचना भी वह नहीं सुन सकती है। यदि अपने पति को किसी ने उल्टा-सिधा कह दिया अथवा बुराई की तो पतिव्रता नारी एक शब्द कान में पड़ते ही अपना प्राण वहीं त्याग कर देती है -

पतिव्रता नारी पति ने पूजे, सेवे ते अनेक पेरे।
पीउ पर वचन सुने जो वांकूं, तो देह त्याग तिहा करे॥ (किरंतन-६४/१९)

अपने इष्ट देवता का अनादर कर अन्य देवी-देवताओं की पूजा करने वाले भक्त या साधक को श्री प्राणनाथजी एक व्याभिचारिनी नारी के समान बताते हुए तुच्छ मानते हैं-

पतिव्रता पणे सेविए, नव थाय वेस्या जेम।
एक मेली ने अनेक कीजे, तेनी थाय धनीवट केम॥ (किरंतन-१२८/४४)

पुरुष भाव से प्रियतम को रिझाया नहीं जा सकता है। क्योंकि सभी आत्माएँ उनकी प्रियतमाएँ हैं। पुरुष केवल वही पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्ण हैं। अतः नारी भाव और उसमें भी एक निष्ठ पतिव्रता भाव से पूजा करने पर ही पूजा पूर्ण सार्थक होती है।-

पुरुषपने एह दृष्टें न आवे, अबलापने लीजे अंग।
पुरुष नथी एह बिना कोई बीजो, जे रमे नेहेचल लीला रंग॥ (किरंतन-६४/९)

४४-विरहानुभूति

बाह्य चेतना लुप्त हो जाती है तथा भीतरी चेतना शरीर को नहीं त्याग देती है ऐसी स्थिति में अपने प्रियतम के अभाव में एक विरही आत्मा के हृदयमें जो विरह की भीषण आग प्रज्वलित हो

उठती है वह बढ़ती ही रहती है तथा हृदय को जलाती रहती है। उस विलखती, गुनगुनाती, लड़खड़ाती, चीखती मिटती, विरह वेदना से आतुर विरही आत्मा की समग्र चेतना प्रिय दर्शन के लिए 'एक प्रियतम' पर ही केन्द्रित हो जाती है। अन्य किसी प्रक्रिया का ध्यान नहीं रहता। जब तक चित्त विरह की आग में जलकर कुन्दन की तरह पवित्र नहीं होता तब तक प्रिय का दर्शन नहीं होता है, तथा विरहिणी आत्मा अपने प्रियतम की अर्धाङ्गिनी बनने योग्य नहीं होती। इस अवस्था में साधक पहुँच जाता है तभी सारीरिक व मानसिक विकार से वह मुक्त हो जाता है, तथा परमात्मा को प्राप्त कर सकता है। विरहानुभूति में ही एकाग्रता का पूर्ण अनुभव होता है, तथा असीम सत्ता के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।

विरहिणी आत्मा विरह वेदना से इतनी तड़प रही है शायद उनका प्राण अपने शरीर से भिन्न हो चुका है निम्न पक्तियों में विरही आत्मा के विरह की व्याकुलता का संकेत मिलता है–

श्याम गया जब मधुवन को, देखी न चाल उसकी कहीं ।
हियमें आग लगी व्रज वधु के, पल-पल मिल सब रोती रही ॥
कान्हा ! कान्हा ! कहत पुकारे, पर धरणी में श्याम नहीं ।
आघात हुआ उनके दिल भीतर, शायद सब में प्राण नहीं ॥
कैसी खटपट श्याम की लीला, निश्चित सब का प्राण वही ॥

विरहिणी आत्मा विरह की मर्मांतक पीड़ा में अपना सिर तलवार से काटने को तैयार हो जाती है। प्रत्येक अंग-प्रत्यांग को काट कर चीर-चीरकर उनमें नमक-मिर्च भरने को तत्पर है, क्योंकि वह पीड़ा भी प्रियतम परमात्मा से मिलन की चाह में तड़पने और विरहाग्नि में जलने से कम है। महामति श्री प्राणनाथजी की आत्मा करुण कन्दन कर रही है कि उसने प्रियतम का विछोड़ कैसे सहा है–

ओहि ओहि करती फिरों, और करों हाय हाय रे ।
पीउजी विछोहा क्यों सहूं, जीवरा टुक-टुक होए न जाए रे ॥

संग पीउ के ना चली, क्यों रही पीउ सों बिछुर रे ।
त्राहि-त्राहि करुँ रे सजनी, पीउ जी दियो मोहे छेह ।
जल बल बिरहा झाल में, भसम ना हुई जीव देह ॥ प्रकाश. हि. ६/१,७०,७१)

विरह की गति को वही जान सकता है जो एकबार प्रिय से मिलकर बिछुड़ गया हो । इन्द्रावती (अपनी परात्म स्वरूप) के रूप में महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं कि जिस प्रकार जल के बिना मछली की दशा होती है उसी प्रकार हम आपके बिना इस मिथ्या जगत् में आकर आकुल-व्याकुल हैं-

बिरहा गत रे जाने सोई, जो मिलके बिछुरी होए । मेरे दुल्हा ।
ज्यों मीन बिछुरी जलथें, या गत जाने सोए, मेरे दुलहा ॥
बिरहिनी बिलखे तलफे तारुनी, तारुनी तलफे कलपे कामनी । (कलश. हि.-६/१)

दु:ख से परमात्मा के विरह की अनुभूति होती है । यह अनुभूति ज्यों-ज्यों गहरी होती जाती है, त्यों-त्यों परमात्मा के प्रति आकर्षण बढ़ता है अत: दु:ख बाधक नहीं है साधक के लिए तो दु:ख भी सहायक हो जाता है-

दुख से पीऊजी मिलसी, सुखें न मिलिया कोय ।
अपने धनी का मिलना, सो दुखै से होय ॥ (किरंतन-१४/१०)

विरह का चित्रण-हृदय ग्राही शब्द चित्र भी महामति श्री प्राणनाथजी की वाणी में उन्हीं के शब्दों में देखा जा सकता है-

विरहा न देवे बैठने, उठने भी न देय ।
लोट पोट भी ना कर सके, हूक-हूक साँस लेय ॥ (कलस हिन्दुस्तानी-५/१०)

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म का मूल आधार है 'प्रेम' तथा प्रेम का प्रथम स्वर है 'प्रणाम' यह शब्द युग सापेक्ष न होकर सनातन ब्रह्म सापेक्ष है। आत्मा यदि परमात्मा से विशुद्ध प्रेम करती है, उसके विरह में जलती है तो परमात्मा भी उससे कहीं अधिक प्रेम करते हैं। परमात्मा प्रेम के स्वरूप है। "प्रेम और ब्रह्म" एक है। अतः वह भी अपने प्रेमी भक्त के बिना एक पल भी नहीं रह सकते हैं क्योंकि वह करुणा के सागर है –

हें मूं दिल डिनी साहेदी, तूं मूं रे रहे न दम ॥ (सिंधी–७/१)

"श्रीमद्भगवद्गीता" जो हिन्दू सनातन धर्म का प्राण है। उस आनन्द चिद्घन षडैश्वर्यपूर्ण, चराचर वन्दित, परमपुरुषोत्तम साक्षात् श्रीकृष्ण की दिव्यवाणीमें भी श्री कृष्ण ने कहा है कि जो मुझे सर्वत्र देखता है और सबको मुझमें देखता है न कभी मैं उसकी आँखों से ओझल होता हूँ और न कभी वह मेरी आँखों से ओझल होता है। ऐसे भक्त की वृत्ति, हृदय, भाव, सर्वस्व प्रेममय हो जाते हैं। उसे सब ओर प्रेमके ही दर्शन होते हैं, और सकल विश्व उसके लिए प्रेममय, आनन्दमय एवं कल्याणमय बन जाता है अतः सहृदय एवं सजलनेत्र से सब को मेरी ही विश्व मोहिनी लीला विग्रह समझकर प्रणाम करता है।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म में महामति श्री प्राणनाथजी द्वारा प्रेम–लक्षणा अथवा माधुर्य भाव की भक्ति का जो स्वर है गौड़ीय, हरिदासी भक्ति के अनुरूप होते हुए भी अपनी मौलिकता के साथ प्रतिफलित हुआ है। रसवादी सम्प्रदायों में प्रेम की तीव्रतामें अन्य सभी साधन छूट गये, केवल मात्र मधुर लीलाएँ भक्त का आहार हो जाती हैं, जबकि श्री प्राणनाथजी की वाणी साहित्यसागर में तीव्र प्रेमान्तिकता के साथ भक्तिका नैतिक एवं सामाजिक पक्ष भी मुखरित हुआ है। परमात्मा की कृपा पात्र बनने के लिए ज्ञानविरह मूलक भक्ति की आवश्यकता होती है परन्तु परमात्मा के साक्षात्कार के लिए तो प्रेमविरह मूलक भक्ति की ही जरूरत होती है। ज्ञान विरह में कभी–कभी ज्ञानका अहंकार

आ भी सकता है, अथवा अहंकार आनेकी सम्भावना बनी रहती है। परन्तु प्रेम विरह में यह सम्भव नहीं है, क्योंकि 'प्रेम' पूर्ण समर्पण है। अतः श्री कृष्ण प्रणामी धर्म में परा प्रेम-लक्षणा भक्ति को अधिक महत्त्व दिया गया है।

४५-जीवन धर्म एवं व्यवहार

जीवन में निरन्तरता है। गति ही जीवन है। अत्यन्त द्रुतगति से जीवन की धारा आगे बढ़ रही है। जीवन न केवल सुख दुःख का संगम है अपितु अविश्रान्त गति है। ब्रह्मानन्द रससागर प्राप्त करने पर ही यह गति विराम लेगी यह भी हम नहीं कर सकते हैं। महामति श्री प्राणनाथजी की तारतम वाणी में आत्मा एवं पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्ण के साथ परमधाम में शाश्वत व नित्य सम्बन्ध को ही वास्तविक जीवन कहा गया है-

ब्रह्म सृष्टि लीजियो, हां रे सैया ए है अपना जीवन।
सखी मेरी जो है मूल वतन, ब्रह्म सृष्टि लीजियो॥ (ता. सागर परि. प्र.२/१)

अपरा प्रकृति से पर पराप्रकृति है। जो नाशवंत हदकी भूमिका है, वह अपरा प्रकृति के अन्तर्गत आती है। परा प्रकृति हद वेहद से पर शाश्वत है। हदकी भूमिका के इस प्रकृति की सातत्यता (निरन्तरता) से भी परे क्या है, परा प्रकृति क्या चींज है ? इस विषय को जानने से पहले अपने जीवन रहस्य को जान लेना, भलिभाँति उस वस्तु को दिल में उतारना अति ही आवश्यक है। क्योंकि जीवन को सुन्दर एवं संसार को स्वर्ग भी क्यों न हम बनाए, एक न एक दिन ए दोनों मिट जाने वाले हैं, अजर-अमर तो आत्मा ही है, जिसका मूल ठिकाना परमधाम है।

जीव का शरीर के साथ जब तक सम्बन्ध बना रहे तब तक की उस अवस्था को जीवन कहा जाता है। शरीरमें जीवके अभावको मृत्यु कहा जाता है। देहयुक्त प्राण, प्राणी (जीव) कहलाता है।

घटना व बढ़ना देहका स्वभाविक धर्म है। देह क्षणिक है, नश्वर भी। देह बढ़ती है, घटती है तथा अन्त में नाश हो जाती है। देह स्थित प्राण विश्वका मूल तत्त्व है। प्राणका मूल–जीवात्मा है। दृष्टा और भोक्ता के भेद से जीवात्मा एवं ईश्वर रूपमें भी इसकी व्याख्या शास्त्रों में की गई है। जीवात्मा का मूल आत्मा है, तथा आत्मा का मूल परमात्मा है। प्राण है तो प्राणी है। प्राणी है तो जीवात्मा। जीवआत्मा है तो आत्मा है, आत्मा है तो परमात्मा अन्यथा कुछ नहीं। चेतन तंत्रका मूल संबन्ध ही अक्षरातीत श्रीकृष्ण से है जो परमधाम में विराजमान हैं।

मानव हमेशा एक ही स्थिति में नहीं रह सकता है, या तो वह सुखी है या दुःखी। सुख एवं दुःख जीवन के ये दो चक्र हैं। हमारा भाग्य भी कभी दुःख का साथ देता है तो दुर्भाग्यता की नौवत आ जाती है, कभी सुख का साथ देता है तो हम सौभाग्यशाली बन जाते हैं। यह सब हमारे भाग्यका खेल है जो भाग्यचक्र के रूपमें बदलता ही रहता है–

"चक्रारपंक्तिरिव गच्छति भाग्यपंक्तिः" ॥

अच्छे–बुरे कर्मों के प्रभाव से जीवन में सुख एवं दुःख आते ही रहते हैं। लोक व्यवहारिक दृष्टिसे जीवन–लौकिक तथा अलौकिक दो प्रकारके होते हैं। यह हमारा लौकिक जीवन अस्थिर व चलायमान है। अवस्था क्रममें हम शैशव, (शिशुकाल,) बाल्य, यौवन तथा वृद्धावस्थाको प्राप्त होते हैं, फिर उष्माभरी रंगीन जिन्दग़ी का विराम काल आ जाता है, फिर अविराम यात्रामें हम सदाके लिए लीन हो जाते हैं। यहीं जीवनकी नियति व सातत्यता (निरंतरता) है।

मानव जीवन एक निश्चित लक्ष्यके लिए प्राप्त हुआ है। वह लक्ष्य है परमात्मा। मानव जीवन प्राप्त करने का दुर्लभ मौका हमें प्राप्त हुआ है, अतः हम भाग्यशाली हैं। हमें जीवन में कोई न कोई अपना लक्ष्य बनाना चाहिए जिसे कि हम अपने जीवनके स्वर्णिम पलका उजागर कर सकें तथा अंतिम लक्ष्य की प्राप्ति हो सके। मानव जीवन न केवल नए क्षितिजकी तलाश व कीर्तिमान स्थापित करने के लिए मिला है। यह आत्मसाक्षात्कार और परमात्मा प्राप्ति के लिए एक दुर्लभ मौका है

(oppertunities) चलें इस असीम यात्रा की ओर जहाँ धर्म हमारा मार्ग दर्शक बन सहारा देता है प्रेम प्रणाम के साथ धर्म यात्रा में सम्मिलित हो जाए।

धर्म :- धृ धातु से धारण करने के अर्थ में 'धर्म शब्द' बना हुआ है। यहाँ शाश्वत सत्य को धारण करना धर्म का संकेत है। मानव जीवन में मधुर सम्बन्ध स्थापित करने वाला विधान व जीवंत तत्त्व धर्म है। मानव जीवन के सर्वतोमुखी (अलराउड) विकास में धर्म की अहम भूमिका है। अतः मानव शरीर ही नहीं प्राणीमात्र के अंग प्रत्यांग में धर्म ओतप्रेत है। जीवन की सर्व व्यापिनी ऋतम्भरा प्रज्ञा शक्ति का विकास धर्म से ही सम्भव है, सत्-चिद्-आनन्द जीवन का यथार्थ है। धर्म सच्चिदानन्द स्वरूप तक पहुँचाने वाला अमूल्य व अचुक साधन है। धर्म पर आधारित जीवन ही वास्तविक जीवन है। धर्म से ही जीवन की रक्षा होती है-

"धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः"

इसिलिए धर्म को मानव जीवन का अभिन्न अंग के रूप में भी कल्पना की गई है। तेजी से बदलते मानव जीवन मूल्यों के इस अस्थिर युग में द्वद्वों और तनावों से घिरे मानव का सच्चा पथ प्रदर्शक तथा आत्मा का एक मात्र पोषक तत्त्व धर्म ही है।

देह धारी प्राणियों में मानव, प्रकृतिका सर्वोत्कृष्ट तथा सर्वश्रेष्ठ कृति है। मानव जीवन प्राप्त करने पर ही अखण्ड फल की प्राप्ती होती है। अतः इस महामूल्य जीवन को वृथा गवाँना उचित नहीं है-

"मानव देह अखण्ड फल पाइए, सो क्यों पायके वृथा गमाइये"। (ता. वाणी)

मानव स्वभाव से ही प्रिय, भावुक एवं दयालु है। उसके कोमल हृदय मंदिरमें क्षमा, अनुराग, प्रेम, आकांक्षा, दया आदि गुणोंका अक्षय भण्डार है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, इर्ष्या आदि मानव के

नैसर्गिक गुण हैं। इन सभी गुणों पर विजय प्राप्त करने केलिए एक मात्र सहारा धर्म ही है। मूल रूप में धर्म शाश्वत है, परन्तु लौकिक व्यवहार में कर्तव्य, अनुशासन एवं प्रामाणिकता को हम धर्म कह सकते हैं। धर्म वास्तव में सत्य का बाह्य कलेवर होते हुए भी शाश्वत जीवन मूल्य स्थापित करने वाला अचुक व अतुलनीय साधन है। सत्य में विधि निषेध नहीं है। परन्तु धर्म में यह नियाम लागू नहीं होता है। देश काल विविध परिस्थितियों में विविध जातियों में अलग-अलग रूप दिखता हुआ भी मूल में धर्म का एक ही स्वरूप है केवल नाम मात्र से भिन्न है। धर्म मानव जीवन का राजपथ है विविध मत-मतान्तर इस राजपथ पर पहुँचने के अलग-अलग छोटे-छोटे साधन हैं, वे सभी धर्म के ही अंग प्रत्यांग हैं। जब अंग प्रत्यांगों में विकार उत्पन्न हो जाता है तो उसे धर्म पथ नहीं कह सकते, जब तक उन विकारों से उस पथ को मुक्त नहीं किया जा सकता। प्राणी की हिंसा किसी भी धर्म का अंग नहीं है। मन वचन कर्म से हिंसा रहित मानव ही धार्मिक होता है।

धर्म जीवन का आधार स्तम्भ है। प्रकृति से लेकर प्रत्येक जीव धारियों तक धर्म का आधिपत्य है। धर्म के अभाव में जीवन का विराम है। धर्म पर आधरित जीवन विश्व मंगरदायक शांति का धाम है। अनन्त यात्रा की ' विश्व व्यापिनी तथा ऊर्ध्ववाहिनी शक्ति स्त्रोत' ही जीवन का शाश्वत धर्म है। जीव, जीवन रस की मधुर धारा में तभी प्रभावित होता है जब धर्म का रागात्मक सम्बन्ध उसके साथ होता है। मन कर्म एवं वचन से मानव जब सत्य का आचरण करता है तभी वह जीवन में समरसता प्रदान करता हुआ अपना तथा मानव समाज का कल्याण कर सकता है।

व्यवहार :- लौकिक जीवन में व्यवहार का महत्त्वपूर्ण स्थान है। देश, काल, परिस्थितियों के हिसाब से मानव समाज में व्यवहार तरह-तरह के होते हैं। व्यवहार को यदि सुधार ने की ज़रूरत पड़ी तो सब से पहले व्यक्ति को सुधरने की ज़रूरत है। समाज में घुलमिल जाने के लिए व्यक्ति बहुत मीठा बनता है। वह जैसा बाहर दिखावा करता है यदि उसके दिल में भी इसी प्रकार की

भावना हो तो उस छल कपट रहित मानव से परमात्मा प्रसन्न हो जाते हैं। अतः उस के दिल में हमेशा विराजते हैं।–

जैसा बाहेर होत है, तो ऐसा होवें दिल।
अधखिन पिउ न्यारा नहीं, माहे रहे हिल मिल॥ (ता. सागर)

भय ही पाप है, भय ही घृणा है। निर्भय वही है जो धर्मवीर है। निर्भय व्यक्ति ही मानसिक संतुलन बनाए रखने में कामयाव हो सकता है। व्यवहार का सीधा सम्बन्ध मानव के मन मस्तिष्क पर होता है। अतः मानव को व्यवहार कुशल होना नितान्त आवश्यक है। हमारे जीवन की व्यावहारिक कटुता जीवन रूपी नौका को डुबा सकती है। जब तक सौहार्दपूर्ण वातावरण का निर्माण न हो तब तक हमें आत्म निरीक्षण करना चाहिए। दूसरों के सुख, दुःख को स्वीकार कर जब हम आगे बढ़ने की कोशिश करते हैं तब हम अपनी मंजिल को प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु ऐसी परिस्थितियों में अपने व्यवहार में कटुता आना स्वभाविक ही है। इस संसार में कभी भी किसी भी समस्या का शिकार हो जाना ही तो असल माया का खेल है। गुरु एवं परमात्मा की कृपा से हम व्यावहारिक कटुता को सहज से दूर कर सकते हैं। परन्तु इस में सर्त यह है कि हम सर्व प्रथम अपने सोच को बदलें। अनावश्यक वैचारिक प्रदूषण एवं तंगदिली के व्यवहार से अपने को मुक्त रखने के लिए नित्य सद्गुरु का स्मरण कर 'निजनाम' का जाप करें। अधिक से अधिक समयका उपयोग परमार्थ चिन्तन में लगाते हुए हम मन, कर्म एवं वचनसे धर्मका आचरण करें।

मानव स्वभाव से दयालू एवं महान तो है ही परन्तु वह कभी–कभी अपने रास्ते से भटक भी जाता है, वह कल–कल करती हुई मस्ती भरी जवानी की धारा में अति उन्माद के साथ विकृत, निंदनीय, अवान्छनीय, व पैशाचिक कार्य करने लग जाता है। ऐसे अधम कार्य के लिए प्रोत्साहित करने वाली आत्माघाती परिस्थितियाँ उस में अधिक जिम्मेदार होती है। लेकिन हम अपने सोच को सकारात्मक बनाए रखें तथा परमात्मा की अदृश्य सत्ता पर अधिक ध्यान दें तो अवश्यमेव निराशा

(Depression), चिन्ता (Tension) आदि बिमारी से हम मुक्त हो सकते हैं। अतः अपने कुकृत्य का प्रायश्चित हमें खुद को करना है इसलिए व्यवहार को निर्मल बनाने की आवश्यकता है ताकि हम कठोर कष्टदायी आचरण से मुक्त होकर उस प्रियतम का प्रिय बनकर (जिसने हमें जीवन दिया है) जीवन रूपी अधखिली कली का पूर्ण विकास कर सके।

सारांश में मानव जीवन, शरीर एवं प्राण का संगम है। सार्वभौमिक सातत्यता की गति का जागरण मंत्र है। धर्म मानव जीवतका ध्रुवतारा है। व्यवहार मानव शरीर एवं आत्मा का कवच है। अतः सत्य एवं धर्म को केन्द्र में रखकर व्यवहार करने वाला व्यक्ति जीवन मंदिर के मंगलमय पथ पर आगे ही बढ़ता रहता है। वह कभी भी जीवन में हार नहीं खाता। उसकी भावी मंज़िल मंगलमय धवल शान्ति का धाम है। लहलहाते हुए जीवन संगीत के साथ जीवन पथ पर फूँक-फूँक कर पाव रखने वाला व्यक्ति कभी भी निराशाके घेरेमें नहीं आता है। आशा एवं विश्वासके असंख्य दीप जलाते हुए विश्वके सम्पूर्ण प्राणियोंका मार्ग प्रशस्त करते हुए वह जीवन पथ पर आगे बढ़ता ही रहता है, जब तक अपने प्रियतम परमात्मा का साक्षात्कार न हो। ऐसा ही मानव जो संसार में रहते हुए भी विषय वासना से मुक्त होकर, ब्रह्मवासना बनकर मन का मनोरथ पूर्ण करता है। ऐसे ही महानात्मा के लिए श्री प्राणनाथजी भी कहते हैं-

इतही बैठे घर जागे धाम पूर्ण मनोरथ हुए सब काम।
धनी महामति हँस ताली दे, साथ उठा हँसता सुख ले॥

४६-प्रणाम के प्रति समझदारी युग की माँग

प्रणाम मानव जीवन का दर्पण है अतः व्यक्ति, समाज, संस्कृति, राष्ट्र, धर्म एवं आत्मा के मूल स्वरूप का दर्शन प्रणाम के उपयोग से ही सम्भव है। प्रणाम के प्रति समझ विकसित हो जाने पर मानव अधोयात्रा को त्यागकर ऊर्ध्वयात्रा का पथ गामी हो जाता है। वह अहिंसात्मक भावना से ओत-प्रोत आत्म विश्वासी होता है। उसकी जीवन शक्तिका उपयोग विश्वासकी भावनाको बढ़ाने

तथा उसे विश्व आयाम देने में होता है। उसके शैतानियत के कारखाने प्रणाम के उपयोग से स्वतः बन्द हो जाते हैं। उसका हृदय दृढ़ हो जाता है, उसकी विवेक दृष्टि में पारदर्शिता आ जाती है तथा उसके जीवन के प्रत्येक पल दूसरे के जीवन के हर हिस्से का आँसू पोछने तथा उन्हें खुश रखने में प्रयोग होते हैं। उसके मुँह से निकले शब्द सृष्टिकी सौहार्दता के लिए सुगन्ध बिखेरते हैं। वह मासूम कली बनकर खिलता है तथा मानव जीवन में किलकारी देता है।

प्रणाम मानव जीवन का अरमान (ईच्छा) पूर्ण करने वाला मौसमी बहार है। वह व्यवहार का बोझ व वन्धन नहीं है वह प्राणोंका स्पन्दन है यही जीवन सागरका प्रवाह है, जिस का आदि है पर अन्त नहीं। प्रणाम लहर है तो परमात्मा उसका सागर है, प्रणाम यदि मौसमी फल है तो मानव उसका भोक्ता है तथा ईश्वर उसका स्रष्टा है, प्रणाम व्यवधान व बाधारहित सुन्दर सृष्टि एवं जीवनकी खोज व ओज है तो घृणा मृत्यु है, प्रणाम स्वावलम्बन को जन्म देता है तो नफ़रत परावलम्बन, प्रणाम से परमधाम एवं परमात्मा उदित होता है तो पुरुषार्थ से भाग्य। चन्दन, कपूर, फूल, सुगन्ध को बिखेरते हैं, दीपक रोशनी को इसी प्रकार प्रणाम भी हृदय के भाव को बिखेरता है। यह हृदय की प्रति ध्वनि है। हम जो दूसरों को देते हैं वही विश्व व्यापक चेतन शक्ति व विराट से टकराकर करोड़ों गुने विस्तार के साथ हमें ही वापस मिल जाता है। इसीलिए प्रणाम ही हमारा जीवन है और यही हमारा दर्शन। वास्तव में देखाजाए तो प्रणाम हमारी निजी सम्पत्ति है जिसके साथ हम पैदा होते हैं, जिसके सहारे हम जीते हैं, और जिस के साथ हम दुनियाँ से अल विदा होते हैं। अब युग की माँग है कि विश्वके सभी मानव नफ़रत को त्याग कर प्रणाम को निजी जीवन व्यवहार में अपनाएँ। मानव-मानव में प्रणाम के प्रति समझदारी की भावना विकसित हो। यही अभ्यार्थना परमात्मा से करते हुए सर्व व्यापक सत्ता के रूप में सब के घट-घट में विराजमान पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्ण के श्री चरणों में विनम्रता के साथ प्रणाम करते हुए यह सत साहित्य सुमन रूप 'प्रणाम प्रवाह' पुस्तिका विश्व मानवता को अर्पण करते हैं। प्रणाम।

सुख शीतल करुं संसार तुम सेवा से पाओगे पार ॥
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाग्भवेत् ॥
अब देर नहीं उस कल की, अज्ञान सदा ढल जाएगा ।
छू मंत्र होगा एक-एक पलमें, सत्-चिद-आनन्द आएगा ॥
दिल के नयन खोलो मेरे जीवन ! तुम शीतल जल धारा ।
पावन करदो तन मन गुरुवर, तेरा है जग सारा ॥
आकुल-व्याकुल होकर अब तो, जगने यही पुकारा ॥
प्रणाम हमारा-प्रणाम हमारा, प्रणाम है युग का नारा ॥

४७-मानव जीवन

चेतना के विकास क्रम में मानव जीवन अंतिम कड़ी है । वह सृष्टि की सुकृति है, अतः सबसे सुन्दरतम, सर्वोपरि है । वह सृष्टि की जैविक परम्परा की अतुलनीय सम्पदा है । अकल्पनीय, अखूट सम्भावनाओं को लेकर मानव इस विराट धरती पर अवतरित हुआ हैं । उसकी पद चाप से धरती स्वर्ग बन जाती है, उस की महिमा से प्रभावित होकर देवता भी उसके अंग प्रत्यांगों में अदृश्य रूप में विराजते हैं, वास्तव में विवेक पूर्ण अति सूक्ष्म दृष्टि से मानव जीवन को देखा जाए तो वह असंख्य अदृश्य शक्ति का संगम स्थल है, परन्तु सभी शक्तियाँ सुप्त अवस्था में हैं उन्हें जगाने की अति आवश्यकता है । उसे फूल बनकर खिलना है, परिपक्व होकर महकना है । अन्त में आत्मानिर्भर बनकर जीवन की सर्वाधिक उच्चाई को छूना है । 'प्रणाम एवं श्री कृष्ण' उसके जीवन का आधार स्तंभ हैं, अतः उन्हें पहिचानना है । श्री कृष्ण तत्त्व को पूर्ण रूपसे जानकर उन्हें अनन्य भाव से प्रणाम करने वाला ही पूर्ण प्रणामी होता है । वही परमधाम का अधिकारी बन सकता है । ब्रह्माण्ड व्यापी समग्र चेतना उसकी आत्मा की वाह्य चिन्गारियाँ हैं । वहीं अपने आपके मन के

दीपक को प्रज्वलित कर मानव मन के अन्धकार को मिटाकर सृष्टि के इतिहास के पन्नों पर सोने की मुहर लगा सकता है तथा आत्म प्रकाश बनकर विश्व आत्मा को प्रकाशित कर सकता है।

अब देर नहीं उस कल की, अज्ञान सदा ढल जाएगा।
छू मंत्र होगा एक-एक पलमें, सत्-चिद-आनन्द आएगा॥
प्रणाम करुँ जग जीवन को, देकर तारतम मोती।
पल-पल हर दिल शीघ्र प्रगट हो, आत्मा दीप की ज्योति॥

४८-संस्कार का मूल माता

मनुष्य धरती को सजाता है, सँवारता है तथा उसे स्वर्ग बना देता है। इस तरह वह धरती का पुत्र होनेका अपना कर्तव्य पूरा करता है। क्योंकि वह सृष्टि का सौन्दर्य है तथा उसका पुजारी भी। परन्तु यह सब संस्कार से ही सम्भव है। संस्कार माता से मिलते हैं। माता का पावन हृदय ही बालक का विश्व विद्यालय है तथा परिवार संस्कार का केन्द्र है। परिवार ही समाज व राष्ट्र का आधारभूत संस्था है। परिवार की आधारशीला कुलबधू गृहलक्ष्मी होती है।

संस्कार के अभाव में घर भी शमशान में बदल जाता है। भ्रूण हत्या, आतंकवाद, चोरी, डकैती एवं आत्म-हत्या का जन्म संस्कार के अभाव में होता है। कुल वधू-गृहलक्ष्मी की बहुत बड़ी जिम्मेदारी होती है क्योंकि वह घर के स्वामी की अर्धाङ्गिनी तथा घर की रानी होती है। पुत्री रूप में वह सुवासिनी है, विवाह-संस्कार के बाद गृहिणी उसके बाद वह नारी का विराट रूप-वात्सल्य एवं ममता की मूर्ति माँ होती है। माँ का आँचल बालक का साम्राज्य है तथा उसका गोद बालक के लिए स्वर्ग से भी बढ़कर है। अतः माता को चाहिए कि वह संस्कारी, बने, पढ़ लिखकर कम से कम वह अपना कर्तव्य का बोध कर सके तथा अपने बच्चेको संस्कार दे सकें बालक के जीवन में संस्कार का विकास, माता के क्रिया कलाप, उसके हाव-भाव तथा नित्य कर्म को देखने पर होता है। सबसे पहले-माखन की तरह मुलायम उस मासूम बालक की चेष्टा अनुकरण करने में होता है। माता से जो

सुनता है, बालक वही बोलता है। माता जो खाती है बालक वही खाता है। माता जैसा चलती है बालक भी वैसा ही चलता है। क्योंकि माँ ही उसका सब कुछ है। एक से आठ वर्ष तक बालक के मस्तिष्क का पूर्ण विकास होता है। कम से कम दो खरब ज्ञान तन्तु मानव मस्तिष्क में होते हैं। इसी लिए संस्कार शैशवावस्था में ही प्रतिरोपित कर देना चाहिए। ता कि बालक के ज्ञान तन्तु का विकास पूर्णरूपसे हो सके।

संस्कार जीवन में रस भरने बाले होते हैं। यह रस आता कहां से ? संस्कृत भाषा से, हिन्दी भाषा से, संतों की वाणी से, भजन से, गीत या संगीत कविता आदि से। क्योंकि ये सभी संस्कृति के अंग होते हैं। संस्कृति शब्द में सम् उपसर्ग–सम्यक् और समन्वित का वाचक है। ऐसी शोभास्पद कृति को संस्कृति कहते हैं। मानव मात्र की संस्कृति एक ही होती है। किसी देश या समाज में उसीका पूर्णतः या अंशतः प्रकाशन होता रहता है। भारतीय संस्कृति का विश्व व्यापक प्रचार हुआ है क्योंकि यह हमें संस्कार देती है तथा मानव चरित्र का निर्माण करती है। अनादि काल से संसार भरके लोग भारतियों से अपने–अपने चरित्र की शिक्षा लेने के लिए भारत में आते रहे हैं –

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवः॥ (मनुस्मृति–२/२०)

भारत में संस्कार शीलता को वहन करने वाली संस्कृत भाषा है। इस भाषा को मनुष्य जब धारण करता है तब वह उसको पूर्णरूप से अलंकृत करने लगती हैं–

केयूरा न विभूषयन्ति पुरुषं हारा न चन्द्रोज्ज्वलाः।
न स्नानं न विलेपनं च कुसुमं नालङ्कृता मूर्धजाः।
वाण्येका समलङ्करोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते।
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्॥ (नीतिशतक १९–भर्तृहरि)

नारी विलास–वासना की मूर्ति नहीं है परन्तु वह संयम–नियम एवं वंश की रक्षा के लिए धर्म पालन करने वाली, पति के सिवाय दूसरे पुरुष में कामना न रखने वाली धर्म–पत्नी बन सकती है वहीं स्नेहमयी मूर्तिमान परार्थ जीवन धारिणी आदि गुण युक्त माँ का स्थान ले सकती है। अतः वह अभिनन्दनीया, पूजनीया है। जहाँ नारी की पूजा होती है, सन्मान होता है वहाँ अष्ट सिद्धि नव निधि रूप में पूर्ण लक्ष्मी का वास होता है। तथा देवता भी वहीं रमण करते हैं। जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी बड़कर है। – '**जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी**'
सारांश में यहीं संकेत को रेखांकित किया जा रहा है कि प्रत्येक माँ बनने वाली नारी अपने कूल दीप की रक्षा के लिए संस्कारी बने तथा अपने बच्चे को संस्कारीत करें। धर्म परिवर्तन, जाति परिवर्तन की अभिशाप से बचकर माँ का गौरव बढ़ाते हुए राष्ट्रको गौरवान्तित करें। प्रणाम करें, अपने बच्चोंको प्रणाम करना सिखाएँ, इस प्रकार प्रणाम की धारा बहाते चलें।

४९–प्रणाम राष्ट्रीय अस्मिता की पहिचान

प्रणाम से ही राष्ट्रीय अस्मिता की पहिचान होती है। 'प्रणाम' शब्द सुनते ही हमारे कर्णकुहरोंमें मधु–मिश्री–जैसी मिठास घुल जाती है। प्रणत जन को निहारते ही हमारे हृदयसे वात्सल्यकी रसधार उमड़ने लगती है। प्रणाम–बलकी पूँजी से–मुनि मार्कण्डेय ने कल्प कल्पान्तरकी आयु प्राप्त कर ली। प्रणाम के बल से महाराज युधिष्ठिर महाभारत के महासंग्राम में पितामह भीष्म जी एवं द्रोणाचार्य जी से विजय श्री का आशीर्वाद प्राप्त कर विजय प्राप्त किया।

प्रणाम भारतीय संस्कृति एवं राष्ट्रात्मा की आवाज़ है। यही मूल शिष्टाचार है। इसी से हम सभी भारतवासी भावनात्मक रूप में संगठित हो सकेंगे तथा शिष्टाचार में एकरूपता लाकर जीवन को मंगलमय बना सकेंगे।

प्रणाम करने का अधिकार सब को है। प्रणाम के तात्पर्य को भलिभाँति समझकर इसका व्यापक प्रचार करने से ही मानव–मानवता, राष्ट्र–राष्ट्रीयता तथा सभ्य–सभ्यता की रक्षा हो सकती है। प्रणाम करने के लिए कोई जाति निश्चित नहीं है, किसी भी जाति विरादरी के लोगों को हम प्रणाम कर सकते हैं। प्रणाम करने के लिए समय की पावंदी नहीं है, किसी भी समय हम प्रणाम कर सकते हैं। प्रणाम करने के लिए कोई धर्म निश्चित नहीं है। किसी भी धर्मावलम्वियों को हम प्रणाम कर सकते हैं। प्रणाम करने के लिए कोई राष्ट्र निश्चित नहीं है। किसी भी राष्ट्र के लोगों को हम प्रणाम कर सकते हैं।

प्रणाम क्रिया का आचरण करके ही राजर्षि विश्वामित्र गुरुवर वसिष्ठजी का आशीर्वाद पाकर ब्रह्मर्षि बन जाते हैं। प्रणाम–वृत्तिका आचरण करते ही राम रोषानल से झुलसते हुए समुद्र और जयन्त को शांति मिल जाती है। प्रणिपात कवच की अभिरक्षा में ही जानकीजी का भयंकर अपराध करनेवाली राक्षसियाँ अशोक वाटिकामें श्री हनुमानजी के कोपसे अपने को बचा पाती हैं। प्रणाम करनेसे ही प्रणयमुग्धा शकुन्तलाको कण्वाश्रममें महर्षि दुर्वासा के शाप से वचाव का मार्ग मिलता है। भगवान शंकरको प्रणाम नहीं करने पर दक्षप्रजापति को विनाश होजाना पड़ा था। संक्षेपमें जीवनका रक्षासूत्र ही प्रणाम है, जिसके प्रयोग मात्र से मानव निर्भय होकर वह महामानव बन सकता है।

५०–साष्टांग प्रणाम का विधान

आठ अंगों से समर्पण भाव से किया गया प्रणाम साष्टांग प्रणाम कहलाता है। वे आठ अंग हैं– जानु, पाद, हाथ, उर, बुद्धि, सिर, वचन और दृष्टि। भारतीय प्राचीन विधि के अनुसार प्रणाम करते समय व्यक्तिको पेटके बल, भूमिपर अपने दोनों हाथ आगे फैलाकर लेट जाना चाहिए। इस क्रममें मस्तक, भ्रूमध्य, नासिका, वक्ष, उरु, घुटने, करतल तथा पैरोंकी अँगुलियों के ऊपरी भाग को भूमि–स्पर्श करना चाहिए। तदन्तर दोनों हाथों से सम्मान्य पुरुषके चरणोंका स्पर्श करके घुटनों के

बल बैठकर उनके चरणों से अपने कर-तलका स्पर्श कराना और उनके पादाङ्गुष्ठोंका हाथों से स्पर्श करके अपने हाथोंको नेत्रोंसे लगाना चाहिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि दाहिने हाथ से दाहिने पैरका तथा बायें हाथसे बायें पैरका स्पर्श होना चाहिए यह प्रणाम की पूरी प्रक्रिया है। घुटनोंके बल बैठकर गुरुजनोंके चरणोंसे मस्तकका स्पर्श कराना इस क्रियाका अर्ध्दरूप है। दोनों हाथ जोड़कर मस्तक झुका लेना इसका सांकेतिक रूप है। बिना दोनों हाथ जोड़े, मस्तक झुकाए प्रणाम सम्भव नहीं, शोभनीय नहीं। एक हाथ से अभिवादन करना तो सर्वथा त्याज्य है।

५१-प्रणाम क्रिया में ध्यानमें रखने वाली बातें

(१) यदि अपना शरीर शुद्ध न हो, स्वयं स्नान नहीं किये हो तो प्रणाम करते समय गुरुजनोंका स्पर्श नहीं करना चाहिए।

(२) स्नान करते समय, शौचादिके समय, तैलाभ्यङ्गके समय तथा शव ले जाते समय प्रणाम नहीं करना चाहिए।

(३) शमशानमें, देव-विग्रहके समक्ष, कथा स्थलमें मानसिक प्रणाम ही करना चाहिए।

(४) स्त्रियोंको अपने पति के अतिरिक्त सभी पुरुषोंको दूरसे ही प्रणाम कर लेनी चाहिए।

(५) रजस्वाला-(रजोधर्म में होने वाली) स्त्रि किसी भी चींज का स्पर्श न करें तथा मानसिक रूपमें प्रणम करें।

(६) अपने समान लोगोंको दोनों हाथ जोड़कर अञ्जलिको ठीक मध्य वक्षः स्थलमें लगाकर मस्तक झुकाकर प्रणाम करना चाहिए१।

१. कल्याण पत्रिका गीता प्रेस गोरखपुर- संख्या-५वर्ष ८०-पृ. सं. ६७६-६७७ ॥

५२-प्रणामसे विश्वकुटुम्ब की भावना साकार होगी

प्रणाम भारतीय प्रणामी प्रज्ञा (मानस) का चमत्कारिक आविष्कार है। यह सार्वभौम है। यह सबके लिए उपयोगी तथा सभी जगह लागू हो सकता है। इसके व्यापक प्रचार एवं प्रयोग से आतंकवाद, निराशावाद, मतवाद, अवसरवाद, धर्म मतान्तरवाद कट्टरवाद, प्रान्तवाद, फाँसीवाद तथा घातक हथियार बनाने की होड़नीति में विराम लग जाएगा। विकास का नया सूर्य उदय होगा। सभी लोग प्रसन्न होंगे। चोरी डकैति, लूट-मार एवं हत्या आदि हिंसात्मक बिमारी का काला पर्दा मानव के हृदय पटल से हमेशा के लिए उठ जाएगा। धरती का हर कोनेका मानव अपना बन जाएगा- उसमें भाव होगा, एक दूसरेपर विश्वास की भावना होगी, वह सम्पूर्ण मानवता का पूजारी होगा। दैवीबल, आत्म-बल तथा अध्यात्मबल का विकास होगा। मानव मस्तिष्क स्थित २ खरब ज्ञान तन्तु (न्यूरान) सक्रिय हो जाएंगे। विश्व एकात्म बन जाएगा तथा 'वसुधैवकुटुम्बकम्' की भावना चरित्रार्थ हो जाएगी।

कौन किसको प्रणाम करें ? कब और कहाँ प्रणाम करें ? क्यों और कैसे प्रणाम करें ? अब घड़ी आ गई है अग्नि परीक्षा की, यह निर्णय अपने आप को लेना है। सौ प्रतिशत अंक प्राप्त करना है। सफलता की कुञ्जी अपने हाथ में हैं। निम्न पंक्तियों को ध्यान से पढ़ें, पूरे मनोयोग से पढ़ें, प्रथम मुस्कुरायें, प्रसन्न हो जायें तथा निर्णय भी लें और प्रणाम करना शुरु कर ही दें -

१. विद्यार्थी स्कूल–कालेज जाते–आते समय एक दूसरे को प्रणाम करें । प्रणामका उपहार बांटते चले ।

२. किसान हल जोतते, बीज बोते, पाला बनाते, पौधा लगाते, पानी सींचते, खाद देते, खेती काटते आदि समय धरती माँ एवं श्री कृष्ण को प्रणाम करें । अपने परिवार में भी प्रणामका व्यवहार करें ।

३. मजदूर हाथों से हर प्रकारका काम करनेके पहले श्री कृष्ण (परमात्मा) को प्रणाम करें तथा रास्तेमें जाते–आते समय सभी को प्रणाम करें । प्रणाम के साथ प्रेमभरा मुसकान होतो प्रणाम रंग लाएगा और सबको भाएगा ।

४. वकील कचहरी से, दुकानदार अपनी दूकान से, अध्यापक विद्यालय से आते–जाते समय राह में उन्हें कोई भी मिले तो उन्हें प्रेम से प्रणाम करें ।

५. उच्च अधिकारी, मिनिष्टर, सेक्रेटरी, जज, मुसिफ, जिलाधीश, परगना–या विकाश अधिकारी, डिप्टी कलक्टर, पुलिस अफसर, डिफेंस–कर्मचारी, जल–थल–वायु सेना, रेलवे वोर्ड के अधिकारी–अफसर तथा कर्मचारी, डाक–तारके कार्यकर्ता, तहसीलदार, कानूनगो, पटवारी, चौकीदार, इंजीनियर, पाइलोट, वैज्ञानिक, दार्शनिक, ओवर सियर, मेट, जिला वोर्ड तथा म्युनीसीपालीटी के अधिकारी तथा कर्मचारी, बैंकोंके अधिकारी तथा कर्मचारी, औषधालय के अधिकारी–डॉकटर, नर्स, ट्रान्सपोर्ट ऐजन्सी के अधिकारी एवं कर्मचारी, कष्टम अधिकारी एवं कर्मचारी, आर.टी.ओ. यातायात परिवहन निगम के अधिकारी और कर्मचारी, बस चालक, कॉन्ट्रेक्टर, आदि सभी लोग जाते– आते समय एक दूसरे को सविनय पूर्वक प्रणाम करें ।

६. एयर इंण्डिया (Air India) एवं ईण्डियन एयर लाइन्स (Indian Airlines) के सभी स्टाप वर्ग आपस में अथवा हवाई यात्रियों के साथ मिलते समय मुसकान के साथ एक दूसरे को प्रणाम करें । पर्यटक एवं नागरिक उड्यन (Tourist and Civil Aviation) के सभी कर्मचारी अपने रास्ट्रकी अस्मिताकी पहिचान के लिए जब भी जिस किसी से अभिवादन करना पड़े कृपया प्रणाम शब्द का ही प्रयोग करें । देश–विदेश जहाँ कहीं भी हो प्रणाम का ही व्यवहार करें ।

७. व्यापारी, सेठ–साहूकार उद्योगपति, आढ़तिये और दलाल, ग्राहक आदि सभी लोग प्रणाम का ही प्रयोग करें । औद्योगिक ईकाइ के लागोंके साथ प्रणामका प्रयोग करें ।

८. धर्म प्रचारक, साधु सन्त–महन्त, कथाकार, नाटक कार, मंदिर के पुजारी, भंडारी, कोठारी फलाहारी, मौनी, कलाकार, संगीतकार आदि सभी सज्जन प्रणाम का ही प्रयोग करें ।

९. अध्यापिकाएँ तथा शिक्षार्थिनी– छात्राएँ, मासूम बालिकाएँ विद्यालय परिसर में अथवा जाते–आते समय प्रणाम का प्रयोग करें ।

१०. रूपरानी पढ़ी–लिखी बहिने साज–श्रृंगार बहुत करती है, फैशनपरस्त होती जा रही है, प्यारी बहिनों ! कम श्रृंगार में संतुष्ट रहें, पर वे भी रूप निखारते, श्रृंगार करते समय श्याम–सुन्दर को प्रणाम करें क्योंकि त्रिभुवन मोहिनी राधा एवं कृष्ण से बड़कर कोई सुन्दर नहीं है अतः युगल स्वरूप को याद कर प्रणाम करें, इससे अपना रूप और निखरेगा, साथ–साथ प्रणाम का उपहार भी होगा ।

११. गृहस्थ माँ–बहिनें, रोटी बनाते समय, भोजन बनाते समय, चक्की पीसते समय, दधी मथते समय, पानी भरते समय, गौ–सेवा करते समय, चावल–दाल में कंकड़ बीनते समय, धान कूटते

समय, आमादि की चँटनी या अँचार बनाते समय, झाड़ू लगाते समय, कपड़ा धोते समय, (शौचादि के समय, मन ही मन) श्री कृष्ण को प्रणाम करें।

१२. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सभी नर–नारी को जब भी मौका मिले प्रणाम करें क्योंकि प्रणाम रक्षा कवच है। इससे हमारे अशुभ विचार खत्म हो जाते हैं तथा जीवन की रक्षा होती है।

१३. सोनार, लोहार, कुम्हार, सुथार, माली, भोई, नाई, दर्जी, जुलाहा, धोबी, कुर्मी, चमार, भंगी, कलाल, काजर, गुर्जर, गडेरिया, कोली, भणशाली, तेली, राजपूत, बंगाली, बिहारी, गुजराती, मराठी, पंजाबी, काश्मीरी, सिंधी, तामिल, तेलगु, मद्रासी, उड़िया, बुंदेली, धामी, प्रणामी, निजानन्दी, सीख, जैन, बौद्धिष्ट, नेपाली, असमी, मणिपुरी, नागा, कुकी, आदि भाषा–भाषी, भारत के निवासी सभी भाई बहिने, पंथ–सम्प्रदाय से जुड़े सज्जनवृन्द प्रणाम का व्यवहार करें, राष्ट्रके नागरिक होनेके नाते राष्ट्रधर्मका सम्मान करें क्योंकि प्रणाम राष्ट्रात्मा की आवाज़ हैं। इससे ही राष्ट्रीय अस्मिताकी पहिचान होती है।

१४. वेश्या, चोर, डाकू, लूटेरे, आतंकवादी, प्रेम में असफल नारी, हत्यारे, मजबूरी से धर्म परिवर्तन करने से दुखी भाई बहिने श्री कृष्ण को नित्य प्रणाम करें। ऐसा करने से उनका पाप क्षय होगा। वापस जीवन के मूल धारा में वे प्रवेश हो जाएँगे तथा उनका भी जीवन धन्य–धन्य होगा। इतना आनन्ददायक जीवन होगा जो पहिले की अपेक्षा और बेहेत्तर होगा।

१५. संसद सदस्य विविध मंत्रालय के मंत्रीगण, संस्थान–प्रतिष्ठान आदिसे जुड़े सभीलोग एक दूसरे को प्रणाम कर एक आदर्श राष्ट्रकी पहिचान बना सकते हैं।

१६. मीडिया के कर्मचारी, सीनेमा जगत् से जुड़े, इन्टरनेट वेबसाईट एवं मोबाईल कम्पनी से जुड़े सभी भाई बहिने प्रणाम का प्रयोग करें। क्योंकि प्रणाम युग का नारा है, इसने धरती सँवारा है, यही सभीका सहारा है, यही युगका नारा है, यही जीवन बहार है, यही "प्रणाम प्रवाह" का प्रथम उपहार है तथा यही प्रकाश हृदयका सार है, यही जीवन का आधार है।

५३-प्रणाम परमधाम का पहिचान पत्र

यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड परब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्रीकृष्णकी सत्तामें समाया हुआ है। शौभाग्यशाली परम पुनीत प्रेमी हृदय वाले व्यक्ति जो धर्मात्मा हैं, कल्प-कल्पान्तर सेवा, परोपकार आदि सत्कर्म से जिसका मन निर्मल हो चुका है, मन, वचन तथा कर्म की पवित्रतासे विश्वको प्रेम का दान देनेवाले जिसने अक्षरातीत श्रीकृष्णको अपने प्राणोंमें बसालिया है, उसी प्रभु का विश्वके प्राणियोंमें दर्शन करने वाले तथा परमात्माके प्रेम से विह्वल होकर जिनकी आँखों में अँश्रूकी धारा निरन्तर बहती रहती है, जिनके दिलमें "वसुधैव कुटुम्वकम्" की भावना चरितार्थ हो जानेसे सारा संसार अपना हो गया है, ऐसे स्नेह का दान देकर जगत् को अभयदान प्रदान करने वाले निष्कलंक आत्मा-ब्रह्मसृष्टि स्वरूप सुन्दरसाथको सहृदयता पूर्वक शत्-शत् प्रणाम।

प्रणाम हमाारा जीवन का आधार परमधाम का पहिचान पत्र है। परमात्मा परं ज्योति के स्वरूप परमधाममें विराजमान हैं। वही मनुष्य, देवता तथा ईश्वर आदि के स्वामी है। अत: सौभाग्यशाली आत्माओंसे निवेदन है कि इस धरती को स्वर्ग बनाने तथा परमधाम एवं परमात्मा अक्षरातीत श्रीकृष्णजी के दर्शन के लिए परमधाम का पहिचान पत्र प्रणाम प्राप्त करें। 'प्रणाम प्रवाह' के अध्ययनसे उपर्युक्त पहिचान पत्र प्राप्त किया जा सकता है।

विज्ञान अभिशाप व वरदान भी-५४

आज के इस आणविक शक्ति–"न्यू क्लियर पावर" सम्पन्न आतंकित, औद्योगिकी तथा ज्ञान–विज्ञान प्रतिस्पर्धी युगमें मानव इतिहास के समीकरण बदल रहे हैं। इसका जोरदार असर मानव जीवन मूल्यों पर पड़ा है। रफ़्तार गति से मानव की जीवन शैली में भी बदलाव आ रहा है। एक तरफ आतंकवाद से प्रभावित, गरीबी–अशिक्षा एवं भ्रष्टाचार से पीड़ित तथा कुशासन के शिकार मानव जाति की बढ़ती आबा़दी मर्माहत हैं। वहीं दूसरी तरफ अच्छी खासी संख्या में आज का ऊर्जावान सर्व शक्ति सम्पन्न मानव समाज, अत्यन्त तीव्र गति से विकास के उतुंग शिखर को छूना चाहता है ये वही लोग व महिलाएँ हैं जिनके पिटारे में पर्याप्त मात्रा में धन है। यहाँ तक कि उसकी इतनी उम्मिदें बढ़ गई है कि वह चाँद की जमीन खरीदकर चाँद में ही दुनियाँ बसाने के लिए बेताब है। आतुर है अर्थात् मन बना चुका है।

विकास के अंधाधुंध प्रवाह की होड़ में जीवन मूल्य, धार्मिक अनुष्ठान, आस्था एवं विश्वास की जगह विज्ञान मानव जीवन का हाथ थामने अत्यन्त उत्सुकता के साथ तत्पर है। साधारण जन समुदाय को छोड़कर आज भी केवल वे व्यक्ति जिसके पास पैतृक व ऋषि प्रसाद रूप आध्यात्मिक वैभव (योग, भक्ति, तपस्या, आरोग्य, त्याग व वैराग्य) प्रचुर मात्रा में हैं ऐसे मनीषि गण विज्ञान के व्यामोह के चक्कर में नहीं आते भले उनका भी जीवन विज्ञानमय क्यों न बन चुका हो, क्योंकि उनको पता है कि पूर्वजों के आध्यात्मिक ज्ञान से ही विज्ञान का जन्म हुआ है। प्राचीन भारत के मेधाशक्ति सम्पन्न ऋषि एवं सन्त जन परम वैज्ञानिक थें। भूत भविष्य एवं वर्तमान तीनों काल की नब्ज़ को पकड़ने में वे पूर्णतः सक्षम थें उनकी अच्चस्तरीय कल्पना एवं चिन्तन में ब्रह्म समाया हुआ था, अतः असंख्य वर्षों तक उनसे मानव समाज को जो ऊर्जा प्राप्त हुई वहीं आज भी ज्ञान गंगा के रूप में प्रवाहमान है तथा उसकी गति में प्रवाह की निरन्तरता है। आज का विज्ञान भी आध्यात्मिक रहस्य को समझने के लिए प्रयत्नशील तो है परन्तु अतुलनीय प्रयास नहीं हुआ है वह प्रत्यक्ष व भौतिक वाद की ही अधिक व्याख्या करता है। हाँ.... उसने मानव जीवन, प्रकृति की संरचना की

गहन खोज तथा मानव जीवन के उत्तरोत्तर विकास एवं सुख संवृद्धि के लिए अपनी तरक्की अवश्य की है। मानव जीवन को आबाद बनाने तथा उसके उत्थान के लिए वह वरदान सावित भी हुआ है। उसके इस योगदान व सराहनीय प्रयास का हम सभी सन्मान करते हैं, लेकिन उसने हमें, दूसरा विक्राल–अत्यंत भयावह दिल को दहलाने वाला विकृत चेहरा भी बताया है। विज्ञान ने ही परमाणुशक्ति का दुरूपयोग कर घातक हथियार, अणु–परमाणु बम एवं मिसाइलें आदि का निर्माण कर मानव जाति ही नहीं पूरे विश्व को एक कठघरे में खड़ा कर दिया है। जो कुछ परिश्रम एवं कठोर मेहनत के बल पर उसने प्राप्त किया था, जिस प्रत्यक्ष अनुभव ज्ञान से उसकी ख्याति बढ़ी थी, खुसियाँ बटोरे थें, फव्वारा सजाया था, वे सब के सब दिवा स्वप्न बनकर रह गए हैं, क्योंकि उसने विनाश का बिगुल भी अपने ही हाथों से बजा दिया है। पता तो उसको भी हो ही गया है कि कहीं चुक हो गई है, भूल हुई है, गलती हुई है, परन्तु आग लग जाने पर कुँआ खोदने से अब क्या होगा ? आगे कुँआ तो पीछे खाईकी सी स्थिति बन गई है। प्रचंड वाहिनी विश्व व्यापी अनंत समस्याओं का हल अब तो विज्ञान भी नहीं कर सकता क्योंकि जो बाजीगर था वही कबूतर बन गया है।

विश्व शान्ति एवं अखंडता तथा अमनचैन के लिए आवश्यकता है वैश्विक सन्दर्भ में "प्रणाम" की अहमियत तथा उसके रहस्य को समझना एवं निजी जीवन की दिनचर्या में उसे लागू करना, जब तक प्रणाम का तारतम्य सब के दिल में प्रगट नहीं होगा तब तक वह जीवन अधूरा ही है। क्योंकि 'प्रणाम' ही मानव जीवन की बहार है, एक खिलती हुई जवानी है तथा मानव जीवन की वास्तविक कहानी है, जीवन की सच्चाई की तस्वीर, अहिंसा व प्रेम का बीज है।

"प्रणाम प्रवाह" यह लघु पुस्तिका प्रिय पाठकों के कर कमलों में है, यह नया जीवन का उत्सर्ग है, यही जीवन की वास्तविक धारा है जिसका कोई किनारा नहीं। भारतीय प्रणामी प्रज्ञाशक्ति के आधार पर परमधाम से पाताल तक तथा पाताल से परमधाम तक 'प्रणाम' के प्रवाह का परिचय देने एवं "प्रणाम" के विश्व व्यापक रहस्य का उद्‌घाटन तथा तारतम्य दृष्टि प्रदान करने, ममता–स्नेह,

प्यार व वात्सल्य का नीर बहाने का इस लघु पुस्तिका में सर्वथा मौलिक प्रयास हुआ है, तथा तत्त्वदर्शी भारतीय ऋषि महर्षियों, मनीषियों के विचारों का दोहन कर सोनेमें सुहागका कार्य भी इसमें अवश्यमेव हुआ है। जिन–जिन विद्वानों के विचारोंका सन्दर्भ इस "प्रणाम प्रवाह" पुस्तिकामें लिया गया है चाहे वह भारतीय हो या पाश्चात्य ! हम उन सभी विद्वानों के आभारी हैं। सस्नेह हृदय से उन महानुभाव को प्रणाम करते हैं। उम्मीद है कि इस लघु पुस्तिका के अध्ययन एवं मनन से समाज के सभी वगों एवं नई पीढ़ी के उगते सितारों में "प्रणाम" के प्रति अवश्य ही जागरुकता बढ़ेगी, सबके निजी दिनचर्या में परिवर्तन आएगा एक नया स्नेह भरा संसार खड़ा होगा तथा सब के साथ प्रणाममय "व्यवहार का जन्म" होगा।

इस 'प्रणाम प्रवाह' पुस्तिका की मौलकिता, वास्तविकता, एवं लोक प्रियता का मूल्यांकन तो प्रिय पाठक वृन्द ही करेंगे, फिर भी निरपेक्ष व तटस्थ भाव से इतना तो कहने में मुझे लाघव एवं गौरव का अनुभव हो रहा है कि जीवन के अंतिम सत्य को प्राप्त करने के लिए मात्र चतुर्थ पुरुषार्थ–धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष की प्राप्ति ही नहीं अपने आपकी पहिचान करने की भी ज़रूरत है, फिर मानवता एवं पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्रीकृष्णकी, जो सर्वाधार सर्वाध्यक्ष हैं तथा मूलमिलावा–परमधाम में विराजमान हैं। जिनको प्राप्त करनेके लिए यह अमूल्य मानव जीवन हमें मिला है।

परिशिष्ट भाग

सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

१. भारतीय संस्कृति–कोश–लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय' संशोधित सचित्र संस्करण– १९९९.।
२. संस्कृत–हिन्दी कोश–वामन शिवराम आप्टे–नाग प्रकाशन (छात्र संस्करण)–१९९९. ११. ए./यू. ए। जवाहर नगर।
३. कल्याण पत्रिका गीता प्रेस गोरखपुर–संख्य ५ वर्ष ८०।
४. गरुड़ पुराण।

५. शिक्षार्थी हिन्दी शब्द कोश–डॉ. हरदेव बाहरी ।

६. योग वासिष्ठ उपनिषद् ।

७. देवि भावगवत ।

८. भागवत महापुराण ।

९. विराट पट दर्शन– ले. पं. कृष्णदत्त शर्मा 'सूरि' कानपुर ।द्य

१०. तारतम सागर– महामति प्राणनाथ ।

११. लालदास वीतक ।

१२. निजानन्द चरितामृत– पं. कृष्णदत्त शास्त्री ।

१३. सर्वधर्म समान ? भारत जागृति मोर्चा, ४०२ रत्नदीप बिल्ड़िग नवरंगपुरा अहमदाबाद ।

१४. श्री राधामाधव चिन्तन–हनुमानप्रसाद पोद्दार ।

१५. महाजाति गुजराती– चन्द्रकान्त बक्षी ।

१६. दुनियाँ में रहना किस तरह–ले. आनन्द स्वामी सरस्वती ।

१७. वीर बालक– हनुमान प्रसाद पोद्दार ।

१८. सचित्र विश्व कोश– संपादक. डॉ. बालकृष्ण ।

१९. मनुष्य और धर्म– दौलतसिंह लोड़ा 'अरविन्द'

२०. Encyclopedia of Political Thought-Om Prakash

१–पद्यांश

मैं अलवेली जग की अकेली, प्रणामी बन जाउँगी ।
मुट्ठी में ले सारी दुनियाँ, नटखट तुझे नचाउँगी ॥ १ ॥
नर नारी की शुद्ध चेतना, बनकर तुम को पाउँगी ।
पलकों के पल–पल में छिपाके, मैं तुम को रिझाउँगी ॥ २ ॥
परमधाम की परम पियारी, श्यामा रूप बन जाउँगी ।
रंग महल में पाकर तुमको, पल–पल तुझे बहलाउँगी ॥ ३ ॥
मद मस्त बहार मौसम बनकर, हर पल तुझे नचाउँगी ।

धामधनी के धड़कन में फिर, श्यामा श्यामा लहराउँगी ॥ ४ ॥
जनम जनम की प्यास बुझाने, दिल में तुम्हें बिठाउँगी ।
पिउ- पिउ कहकर छिन-छिन, प्रेम प्याला छलकाउँगी ॥ ५ ॥
पिया के कोमल चरन कमल में, निशदिन शीश नमाउँगी ।
धनी की आज्ञा पालन करके, मैं उनकी हो जाउँगी ॥ ६ ॥
मैं उनकी हो जाउंगी, प्रेम प्रवाह बहाउँगी ।
छल-छल कल-कल प्रेम की धारा, ब्रह्मानन्द बन जाउँगी ॥ ७ ॥

श्री राजश्यामाजी की जय-जय हो ।
श्री सद्गुरु जी की जय-जय हो ।
श्री प्राणनाथ की जय-जय हो ।
श्री छत्रसाल की जय-जय हो ।
श्री नवतनपुरी की जय-जय हो ।
श्री मंगल पुरी की जय-जय हो ।
श्री पद्मावती की जय-जय हो ।
श्री सुन्दर साथ की जय- जय हो ।
श्री कृष्णमणिजी की जय-जय हो ।
श्री रंगील दास की जय-जय हो ।
श्री पदमदास की जय-जय हो ।
श्री गुलाब दास की जय-जय हो ।
श्री प्रकाश चन्द्र की जय-जय हो ।
सब सन्तन की जय-जय हो ।
श्री राजधाम की जय-जय हो ।
श्री भारत माँ की जय-जय हो ।
श्री कृष्ण शरणं मम, श्री राधा शरणं मम ।

श्री श्यामा शरणं मम, श्री राज शरणं मम ॥

२-तारतम ज्ञान एवं परमधाम का वर्णन

कोटि-कोटि कण्ठों से निकली, जीवन अमृतधारा है ।
जागृत ज्ञान की अमर चेतना, तारतम ज्ञान हमारा है ॥ १ ॥
सुप्त हृदय में भाव नहीं था, जब तक तारतम आया नहीं ।
ज्ञान नहीं था क्षर-अक्षर का, भटक रही थी आत्मा कहीं ॥ २ ॥
कृपा हुई श्री कृष्ण चन्द्र की, तारतम सद्गुरु लाए हैं ।
वेद कतेव कुरान पुराण के, तात्विक भेद बताए हैं ॥ ३ ॥
राष्ट्र-राष्ट्र की सुप्त चेतना, तारतम ज्ञान जगाता है ।
जन-जन की वह कष्ट साधना, तारतम ज्ञान दिखाता है ॥ ४ ॥
धर्म कर्म की मूल चेतना, तारतम ज्ञान बताता है ।
रहें जगत् में जब तक हम सब, निर्मल प्रेम बढ़ाता है ॥ ५ ॥
नश्वर और अविनाशी तत्त्वका, तारतम भेद बताता है ।
माया ब्रह्म जीव जगत् का, रहस्य सदा खुलाता है ॥ ६ ॥
प्रेम नहीं है भाई-भाई में, सास बहू और ज्ञानी में ।
तारतम प्रेम सिखाता हरदम, बल निर्बल सब प्राणी में ॥ ७ ॥
लक्ष्य बताकर मूल मिलावा, राज धर्म प्रणामी का ।
मोह मिटाता भटके हुए जन, कामी क्रोधी ज्ञानी का ॥ ८ ॥
देवी, देवता सूक्ष्म जगत् के, जाप लगाते तारतम का ।
ब्रह्म-विष्णु शिव नारायण, ध्यान लगाते तारतम का ॥ ९ ॥
लक्ष्य सभी का मूल मिलावा, निजधाम बड़ा दरबार है ।
राज श्यामा और परमधाम की, शोभा अपरम्पार है ॥ १० ॥
चाँदनी चौक की आभा निराली, मणिमय रत्न प्रकाशी है ।

मध्य श्रेणी की अनुपम शोभा, चमक रही आकाशी है ॥ ११ ॥
सम चौरस मन मोहक प्रांगण, एक सौ छयासठ मंदिर का ।
नव-नव रंग परमानन्द, चिन्मय रूप है अन्दर का ॥ १२ ॥
चबूतरे दो चौक के अन्दर, तैंतीस-तैंतीस मंदिर के ।
नयन रम्य है हृदय गम्य है, झिल-मिल झिल-मिल अन्दर के ॥ १३ ॥
लाल वृक्ष है चबूतरा में, उत्तर दिशा की लाली है ।
हरा वृक्ष है दक्षिण दिशा में, चारोंओर हरियाली है ॥ १४ ॥
सौ सिढियाँ चढ़ उपर देखो, गोल चबूतरा भारी है ।
यहीं नींव हैं रंग महल की, प्रकाश चन्द्र बलीहारी है ॥ १५ ॥
छह-छह हजार मंदिर पंक्ति, दो में बारह हजार हैं ।
दो गलियन में थम्भ चमकते, मेहराव की झलकार है ॥ १६ ॥
नौमी भोम दशमी आकाशी, रंग महल दरबार है ।
ब्राह्मी शक्ति की ब्रह्मकला का, अपरम्पार उपहार है ॥ १७ ॥
प्रथम भोम श्री राजश्यामाजी, सिंहासन पर विराजे हैं ।
मूल मिलावा शोभा बढ़ाने, युगल रूप छवी छाजे हैं ॥ १८ ॥
द्वितीय भोम में भूल भूलौनी, अद्‌भुत दरपण माला है ।
ठौर ठौर हैं बड़े दरबाजे, तृतीय भोम पड़शाला है ॥ १९ ॥
चौथी भोम में निरत की बाखर, नृत्यानंद बहार है ।
झमक झमक पग धरत धरणी पर, झांझर झन-झनकार है ॥ २० ॥
नवरंगबाई वेनबाई तानबाई, सेनबाई कला अपार है ।
रसभर रंग मन उछरंग, तन मन हर्ष अपार है ॥ २१ ॥
नवरंग के संग सखियाँ आनंद, श्री राज भी इस दरबार हैं ।
कणकट-कणकट कड़ला कणके, कंकण की ठनकार है ॥ २२ ॥
झम झम झम झम घूँघरी बाजे, पायल की झनकार है ।
चंग-चंग संग तंबूरे बाजे, डमरूकी डम-डम कार है ॥ २३ ॥

ढोलक ठन-ठन घंटा टन-टन, करते नव-नव ताल हैं ।
नयन की सेना मृदंग ताल में, करती बड़ी कमाल हैं ॥ २४ ॥
घन घोर छटा चहूँ ओर बटा, अब अमृत बूँद वरसाई है ।
तन मन जीवन हरत पिया पर, लाड़ली नवरंग बाई है ॥ २५ ॥
पाँचमी भोम की पचरंगी पाटी, फूलड़े सेज्या सुहाई है ।
सेज सुरंगी पर पियाजी पौढ़े, बंगलन फूल भराई है ॥ २६ ॥
छठी भोम सुखपाल सजे हैं, सातवीं भोम हिंडोला है ।
अठवीं भोम की शोभा निराली, चार हिंडोला ताली हैं ॥ २७ ॥
नवीं भोम की अद्‌भुत लीला, कुर्सी पंक्ति हजार हैं ।
दशवीं चाँदनी चेहेबच्चे नहरें, फुवारों की शोभा अपार हैं ॥ २८ ॥
मध्य सिंहासन श्री राज बिराजे, कुर्सी में बारह हजार हैं ।
मन्द-मन्द मुसकान परस्पर, नित-नित होत अपार है ॥ २९ ॥
छलक रही है छल-छल जमुना, निर्मल नीर की धारा है ।
सात घाट और अमृत वन की, सुन्दर सुरम्य किनारा है ॥ ३० ॥
वट केल पुल वट केल चौकी, चाँदनी चौक से न्यारा है ।
रंग महल और धाम का वर्णन, कितना प्यारा-प्यारा है ॥ ३१ ॥
कुंज निकुंज की शोभा निराली, मधुवन उससे न्यारा है ।
फूल बाग और नूरबाग में, द्रुमदल प्यारा-प्यारा है ॥ ३२ ॥

३-प्रणाम प्रवाह

तुम हो जगत् के प्यारे
आँखों के हो दुलारे
रहते जगत् से न्यारे
फिर भी हो सब के प्यारे ॥ १ ॥

प्राणों के प्यारे- प्यारे
दिल में वसो हमारे
श्री कृष्ण चन्द्र प्यारे
मन में वसो हमारे ॥ २ ॥

पता नहीं है सबको
तेरा वह मूल-मिलावा
सब को पड़ी है अपनी
तारीफ़ की वाहवाह ॥ ३ ॥

मरते हुए अभी तक
अरबों भी हो चुके हैं
झूठे ख्याल लेकर
अब भी सभी रुके हैं ॥ ४ ॥

अब तो तुम आँखें खोलो
अमृत वचन को बोलो
आत्मा की आँकड़ी को
मिल कर खुशी से खोलो ॥ ५ ॥

प्रणाम-प्रवाह चला है
इस में तुम हाथ धोलो
प्रणाम अब मुख से बोलो

दिल से प्रणाम ही बोलो
मन से प्रणाम ही बोलो ॥ ६ ॥

४-पद्यात्मक उद्‌गार

विषय प्रवाह मिटा जब मनमें, फिर विषयों से डरना क्या ?
मन मस्त हुआ मनमोहन पर, मनमोहन बिना करना क्या ?
लोक परलोक आलोक हुआ, अब लौकिक मोहसे डरना क्या ?
मनमोहन में मन मिट गया, मन बिना मोहन करना क्या ? ॥ १ ॥

मनमें मोहन मोहन में मन, मनमोहन जब एक हुआ ।
व्याप्य-व्यापक अब भेद नहीं, मन मागे फिर किससे दुआ ?
मनमोहन सूरत वसी दिल भीतर, अब औरन सो मन लागे क्या ?
मन मस्त हुआ मनमोहन पर, अब भाव औरन का जागे क्या ? ॥ २ ॥

रसमगन हुआ मन रस में लग-लग, मनमोहन तो रस अमृत है ।
श्याम-सुन्दर अनूपरस स्पर्श से, जमुना जल भी चरणामृत है ॥
ब्रह्मप्रिया नित नव रसमें क्यों डुबती, कैसा अमृत अधरामृत है ?
पिउ-पिउ बोलत कोयल नाचे, सखियाँ पावत वचनामृत है ।
श्याम-सुन्दर की लीला न्यारी, नेहकलंक प्रेमामृत है ॥ ३ ॥

प्रकाश हुआ अब घट भीतर, कृष्ण की ज्योति निराली है ।

श्रृंगार किया व्रज वधू सब मिल, जित देखों उत लाली है ।
मोहन मन सब लूट लिया, क्या करे वह बनमाली है ।
दौड़त-दौड़त सखियाँ घर आई, श्याम बिना हिय खाली है ॥ ४ ॥

अधरामृत पर वंशी लगी, अब मोहित हुआ है जग सारा ।
छेड़ लिया मोहिनी ध्वनि मोहनने, वहने लगी अमृत रस धारा ।
भंग हुआ योग कालेश्वरका, रुक गई जमुना रस-धारा ।
चतुरानन, गंधर्व, किन्नर नाच रहे, इन्द्र भी बोले जय-जयकार ।
धरती माता गौरूप धर के, सींच रही दुग्ध रस धारा ॥ ५ ॥

रस में मन- मन डूब गये, जित देखों श्याम अरस-परस है ।
एक-एक पल-पल कठिन हुआ, श्याम बिना पल वरस-वरस है ।
रस लम्पट की दशा तो देखो, रस पाकर भी तरस-तरस है ।
कैसो नेह है व्रज वधू का, श्याम से मिलकर हरस-हरस है ॥ ६ ॥

श्याम गया जब मधुवन को, देखी न चाल उसकी कहीं ।
हिय में आग लगी व्रज वधू के, पल-पल मिल सब रोती रही ।
कान्हा ! कान्हा ! कहत पुकारे, पर धरणी में श्याम नहीं ।
आघात हुआ उनके दिल भीतर, शायद सब में प्राण नहीं ।
कैसी खट-पट श्याम की लीला, निश्चित सब का प्राण वही ॥ ७ ॥

५-'स्तवनम्'
प्रकाशपुञ्जं कमनीयकान्तं माधुर्यरूपं युगलस्वरूपम् ।
सदा वसंतं हृदयारविन्दे श्रीराज राजं सततं नमामि ॥ १ ॥

सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूपं श्रीराजराधायुगलं स्वरूपम् ।
सदा वसंतं निजराजधाम्नि नित्यस्वरूपं सततं नमामि ॥ २ ॥

प्रशान्तचित्तं च तपोनिलीनं रंगीलदासं नयनाभिरामम् ।
सदा वसंतं हृदयारविन्दे ब्रह्माधिभूतं सततं नमामि ॥ ३ ॥

यः सिद्धयोगी गतपापवृत्तिर्भक्तस्य चित्ते विलसन् विलासैः ।
शुद्धात्मना यश्च चकार भक्तिं तं पद्मदासं शिरसाभिवन्दे ॥ ४ ॥

प्रसिद्धनामापि गुलाबदासो विशुद्धचित्तो जगतो विरक्तः ।
विधूतपापं तपसः प्रभावैस्तं वन्दनीयं प्रणमामि भूयः ॥ ५ ॥

प्रकाशचन्द्रः शशितुल्यशीतं प्रकाशमानं सततं समन्तात् ।
प्राणेषु लीनं हृदये वसन्तं तमात्मरूपं शिरसा नमामि ॥ ६ ॥

दोहा-६
प्रणाम जीवन प्रवाह है, मन सरिता का जल ।
बुद्धि ज्ञान सरोवर है, आत्मा सदा निर्मल ॥
परमात्मा परम तत्त्व है, चेतन अविनाशी अनूप ।
माया मिथ्या जग माहिनी, प्रपंच नाना रूप ॥
तीरथ अति पावन क्षेत्र है, भक्त हृदय का धाम ।
सत बार सिर नमाए के, करो नित प्रणाम ॥
प्रणामी धर्म अनमोल है, सब धर्मोंमें सिरताज ।
तारतम ज्ञान के जाप से, सिद्ध होत सब काज ॥
सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी, प्रणामी धर्म निर्माता ।

जीवन को पावन करने, जोड़ो इनसे नाता ॥
श्री प्राणनाथ धर्म-धुरंधर, बुद्ध निष्कलंक अवतार ।
तारतम वाणी परदाता, सकल सृष्टि सिरदार ॥
धर्म, भक्ति ज्ञान गुरु, श्री देवचन्द्रजी भरतार ।
बीज बोया श्री तारतमका, नवतनपुरीधाम आधार ॥
सत, त्रेता, द्वापर, कलि, चार युग को जान ।
श्रेष्ठ युग कलियुग है, ज्ञान कला का खान ॥
शास्त्र पुरान कुरान सब, ज्ञान स्त्रोत प्रमाण ।
जो लगाता इन में मन, वही बड़ा बुद्धिमान ॥
इतिहास साहित्य-दर्शन, ए हैं समाज के दर्पण ।
नित नया चिन्तन कर, करो जीवन का अर्पण ॥

श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर "श्री राजधाम" जैताना का संक्षिप्त परिचय :-

ब्रिटिश शासनके अन्त के बाद नवंबर १९५६ ई. में राजस्थान पूर्ण अस्तित्वमें आया । यहाँ राजपूतोंकी राजनीति सत्ता रहने के कारण इसका नाम राजस्थान पड़ा । राजस्थान का इतिहास-धर्म एवं मातृभूमि की रक्षा के लिए मस्तक चढ़ाने वाले शौर्यपुत्र-राजपूत वीरों, राजपूताने की देवियाँ-वीराङ्गनाओं तथा उनका साथ देनेवाले आदिवासी वीर पुत्रों एवं बलिदानी आत्माओंकी सुसुप्त चेतनाओंको प्रज्वलित करने वाले राष्ट्र धर्मरक्षक साधु-सन्तों, कवियों तथा स्वतन्त्र सेनानियों आदि की वीर एवं शौर्यगाथा से आप्लावित भारत की गौरवमयी क्षात्राधर्म परम्परा के स्वर्णिम पलका उजागर करता है ।

औरंगजेब बादशाह-मुगल शासक की धर्म परिवर्तन की दमन नीतिसे हिन्दू धर्म के विनाश के कारण आत्महत्या के लिए मजबूर चिखती, कराहती, त्राहीमाम करती भोली-भाली हिन्दू जनतामें

अपने धर्मके प्रति धैर्यता बनाए रखने, संगठित करने तथा उन्हें ढाढ़स बाँधनेके लिए राजपूत राजाओंको ललकारते हुए आत्मजागृतिके शंखनादके साथ वि. सं. १७३५ में महामति श्री प्राणनाथजी उदयपुर पहुँचे थे। उनकी ओजस्वी वाणीसे हिन्दुत्त्वकी विलुप्त चेतना में पुनः प्राण सञ्चार हुआ था–

राजारे मलो रे राणे राय तणो, धरम जातां कोई दौडो।
जागों ने जोधा रे उठ खडे रहो, नींद निगोडी रे छोडो॥
छूटत है रे खडग छत्रियों से, धरम जात हिन्दुआन।
सत न छोडो रे सतवादियों, जोर बढ्यों तुरकान॥
कुलिए छकाए रे दिलडे, जुदे किए मोह अहंके मत माते।
असुर माते रे असुराई करे, तोभी न मिले धरम जाते॥
त्रैलोकी मे रे उत्तम खण्ड भरतको, तामे उतम हिन्दू धरम।
ताके छत्रपतियों के सिर, आए रही इत सरम॥ (किरंतन प्र. ५८/१,२,३,४)

आज भी एक प्राचीन श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर उदयपुर में सूरजपोल सुथारवाड़ी में जीर्ण–शीर्ण अवस्था में हैं तथा उस जगह को 'प्रेमीद्वारा' के नामसे जाना जाता है। श्री मुकुन्ददासजी महाराज (नवरंगबाई परात्म का नाम) के करकमलों द्वारा इस मन्दिरका निर्माण हुआ था अतः यह ऐतिहासिक मन्दिर है, जिसका जीर्णोद्धार करना बहुतही जरूरी है।

जैताना, राजस्थान के उदयपुर जिलाका भूभाग है जो सलुम्बर तहसील के अन्तर्गत आता है। यह विशाल कमला अम्बा डेम, उतुंग शिखर धौलागिरि पर्वत के निकट सोमनदी की छलकती मचलती जलधारा के कल–कल निनाद से प्रभावित प्राकृतिक सौन्दर्य मनोहर वन सम्पदा से भरपूर एक सुनम्य व आह्लाद कारी क्षेत्र है जो उदयपुर शहर से ९० कि. मी. दूर बाँसवाड़ा रूट में आता है। यहाँ से ३ कि. मी. दूर आशपुर तथा ३० कि. मी. दूर त्रिवेणी संगम स्थित पवित्र वेणेश्वर धाम है।

देशी विदेशी पर्यटकों के लिए आकर्षणका केन्द्र होनेसे जैताना अपने आपमें एक अलग पहिचान बनाए रखता है। बताया जाता है कि बहुत साल पहिले गाँवका एक पीछड़ा हिस्सा जहाँ छोटे-छोटे गड्ढे थे जहाँ पटेल जाती के लोग गोबर इकठ्ठा करते थे। स्थान का महत्त्व तभी बढ़ता है जहाँ कर्म वीर भूमिपुत्र पैदा होते हैं। श्री पदमदासजी महाराज के चरण स्पर्शसे यह भूमि धन्य हो गई।

आज से ७३ वर्ष पूर्व परंहंस श्री १०८ रंगीलदासजी महाराज के परम शिष्य गर्गाचार्य वंशीय परंहंस श्री पदमदासजी महाराज ने जैताना को तपोभूमि बनाते हुए श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर की नींव रखी। प्रारम्भिक अवस्था में लोग उसे बाबा की मढ़ी (छोटा मठ) कहते थे। श्री पदमदासजी महाराज ने तारतम मंत्र प्रदान कर कई आत्माओं को जागृत करते हुए श्री कृष्ण प्रणामी धर्म में दीक्षित किया तथा ब्रह्मलीन होजाने के पूर्व ही उन्होंने ऐसे पात्र को अपना उत्तराधिकारी चुना जो प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति गाँव के सरपञ्च 'श्री गुलाबदासजी' जिनके हाथ में समाज का नेतृव था।

परम वंदनीय श्री गुलाबदासजी महाराज श्री गौड़ पंडिया ब्राह्मण श्री खेमजी के सुपुत्र थे तथा उनकी माता का नाम अमृताबाई था। १५ वर्ष तक ग्राम पञ्चायत जैताना के सरपञ्चके रूपमें सामाजिक दायित्व को निभाते हुए तथा अपने पद से निवृत हो जाने के बाद घर गृहस्थ परिवार सम्पूर्ण त्यगकर एक विरक्त आत्मा के रूपमें केवल धर्म के कार्य में ही अपने जीवन का ध्येय रखते हुए श्री पदमदासजी महाराज ब्रह्मलीन हो जाने के बाद श्री कृष्ण प्रणामी धर्मका गुरु दायित्व अपने हाथ में लेकर श्री गुलाबदासजी महाराजने विरुवा, गरड़ा तथा जैताना आदिके सुन्दरसाथ के सहयोग से जैताना में एक सुन्दर श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर का निर्माण किया। उनके ज्ञान एवं तप के प्रभाव से कई आत्माओं की जागृति हुई। धर्म का प्रचार बढ़ जाने से श्री गुलाबदासजी महाराज को अपना गुरु स्वीकार करते हुए भक्त लोग एक-एक करके श्री कृष्ण प्रणामी धर्म में दीक्षित होने लगे।

सन १९९७ में श्री कृष्ण प्रणामी धर्म के आद्यधर्मपीठ श्री ५ नवतनपुरी धाम के वर्तमान आचार्य जगतगुरु श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज एवं श्री गुलाबदासजी महाराज के सहमति एवं आशीर्वाद से श्री गुलाबदासजी महराज के उत्तराधिकारी के रूपमें श्री कृष्ण प्रणामी धर्म का प्रचार एवं समाज सेवा करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। श्री कृष्ण प्रणामी धर्म से जुड़े अग्रगण्य सुन्दरसाथ श्री प्रभुलालजी उपाध्याय, श्री हीरालालजी चौबीसा एवं पाटीदार पटेल समाज सहित विविध समाजके सुन्दरसाथ के सहमति से "श्री कृष्ण प्रणामी राज सेवा संस्थान" का गठन कर पंजीकृत किया गया। स्थानीय धर्मप्राण सुन्दरसाथ ट्रस्टमंडल एवं गुजराजके आत्मीय सुन्दरसाथ के सहयोग से लगातार १२ वर्ष तक प्रयास करते रहने पर एक विशाल गगन चुंबि श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर "श्री राजधाम" जैताना के अस्तित्त्व में आया। जैताना के इतिहास में जनता की आस्था एवं विश्वास के रूपमें पाँच मन्दिर है–श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर, श्री नीलकंठ महादेव मन्दिर, श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मन्दिर, श्री गातोड़जी मन्दिर एवं श्री माताजी का मन्दिर । इन पाँच मन्दिरोंमें से श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर "श्री राजधाम" अपना एक स्वतन्त्र ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। आज इसने तीर्थ का रूप धारण करलिया है तथा सुन्दरसाथ एवं भक्तजनोका आस्था एवं विश्वास का मूल केन्द्र हैं। प्रति वर्ष भाद्रपद 'श्री कृष्ण जन्माष्टमी' में यहाँ भव्य मेला का आयोजन होता है।

श्री कृष्ण प्रणामी राज सेवा संस्थान द्वारा 'श्री राजधाम' निर्माण का कार्य अंतिम चरण में पहुँच चुका है। गत वर्ष मई महीने में ट्रस्ट मंडल एवं सुन्दरसाथ के सम्मिलित प्रयास से एक भव्य धर्म महोत्सवका आयोजन कर श्री कृष्ण प्रणामी धर्म परम्पराके अनुसार श्री कृष्ण प्रणामी धर्म के वर्तमान आचार्य जगतगुरु श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज के वरदहस्त से श्री राजश्यामाजी की सेवापूजा प्रतिष्ठा निज मन्दिर "श्री राजधाम" में की गई तथा पूजा का शुभारंभ हुआ।

संस्थान का उद्देश्य :-

श्री कृष्ण प्रणामी राज सेवा संस्थान का गठन भारत के गौरव शाली अतीन को ध्यानमें रखते हुए नई पीढ़ीको ऐतिहासिक, सामाजिक, साहित्यिक, धार्मिक एवं दार्शनिक आदि विविध विषयों से परिचित कराने तथा आधुनिक शिक्षा प्रणाली खोल करके कम्प्युटर (तकनीकी) आदिके ज्ञान से युवा पीढ़ीको लाभान्वित करने के उद्देश्य से किया गया है। दूसरा इसका मूल उद्देश्य है मानव–जीवन मूल्य की रक्षाके लिए वैश्विक सन्दर्भमें महामति श्री प्राणनाथजीके वाङ्मय तारतम वाणी का प्रसार–प्रचार करना जिसे कि मानव–मानवके बीच एकता एवं आत्मा विश्वास के भाव पनपा जा सके तथा **वसुधैव कुटुम्बकम्** की भावना चरित्रार्थ किया जा सके।

योजनाएँ जितनी विशाल होगी कार्य प्रबन्धन में धन और जन की उतनी आवश्यकता होगी। इससे भी ज्यादा आवश्यकता उस व्याक्तिकी होगी जो राष्ट्र एवं मानव पीड़ा से परिचित हो तथा कार्य संचालन में प्रामाणिकता एवं कुशल क्षमता रखता हो। हम कहाँ तक पहुँच सकेंगे तथा सफलता प्राप्त कर सकेंगे यह तो आने वाला भविष्य ही बताएगा, जहाँ तक सम्भव हो सके हम अपनी प्रगति का प्रयास जारी रखेंगे अतः हमारी संवेदना से परिचित होकर जो सज्जन हमारी संस्थाके उत्कर्ष के लिए अपना सहयोग देना चाहें अथवा अपनी पूँजी लगाना चाहें हृदयता पूर्वक हम उनका स्वागत करते हैं।

प्रकाशानन्द शास्त्री

अध्यक्ष

श्री कृष्ण प्रणामी राजसेवा संस्थान जैताना

परिचय :-

नाम- श्री प्रकाशानन्द शास्त्रीजी

जन्म स्थान- प्रसाई वस्ती, उत्तर मणिपुर ।

जन्म तिथि- ०१-०१-१९६३ ।

माता- पिता-श्री हरिप्रसाद घिमिरे श्रीमति जगमाया घिमिरे ।

वंश- काश्यप गोत्रीय ब्राह्मण ।

शैक्षणिक योग्यता- शास्त्री, सेतु, एम. ए. (हिन्दी) एम. फिल, ।

दीक्षा गुरु- गुरुजी श्री टिकानन्द शास्त्रीजी महाराज ।

विद्याध्ययन केन्द्र- श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर

रूचि- आध्यात्मिक प्रचार-प्रसार, धार्मिक पत्र-पत्रिकाओंमें लेखोंका प्रकाशन ।

संस्थान- श्री कृष्ण प्रणामी राजसेवा संस्थान जैताना तहसील सतुम्बर जि. उदयपुर (राज.)